मूल्य : 20/-
घोषणा पत्र संख्या : 153/2016-17
वर्ष : २
मई २०१८, विक्रमी सम्वत् २०७५
सृष्टि सम्वत् १९६०८५३११९ दयानन्दाब्द १९५
अंक : ११

ओ३म्

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ।।

सत्य और ज्ञान से भरपूर आर्यसमाज नोएडा का मासिक मुखपत्र

विश्ववारा संस्कृति

मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

"सा प्रथमा संस्कृतिविश्ववारा"

नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि ऋतं वदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु तद्वक्तारमवतु। अवतु माम्। अवतु वक्तारम्।।

ईश्वर का व्यापक ज्ञानस्वरूप पूज्य और सहज स्वभाव जानकर हम उसकी उपासना करें तथा जीवन में सदा सत्य का आचरण करें।

युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती
1824-1883

स्वामी श्री दीक्षानन्द
स्मृति दिवस : 15 मई

वीर सावरकर
जन्म दिवस : 28 मई

श्यामजी कृष्ण वर्मा
पुण्य तिथि : 31 मई

हिन्दू मंच सोनीपत के कार्यक्रम में यज्ञ कराते एवं प्रवचन करते आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार जी।

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।।

विश्ववारा संस्कृति

मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

संरक्षक
श्री आनंद चौहान, श्री सुधीर सिंघल
श्री रविन्द्र सेठ 'प्रधान'

प्रबंध संपादक
महामंत्री आर्य कै. अशोक गुलाटी

संपादक
आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार

व्यवस्थापक
ओमकार शास्त्री

प्रकाशक और मुद्रक
स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक डॉ. जयेन्द्र कुमार द्वारा वत्स ऑफसेट, मुद्दा हाऊस, सी-ब्लॉक, बारात घर, चौड़ा रघुनाथपुर, सेक्टर-22, नोएडा से मुद्रित एवं आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा, गौतमबुद्धनगर से प्रकाशित किया।

Title Code : UPMUL-200652

घोषणा पत्र संख्या : 153/06.06/2016-17

मूल्य

एक प्रति	: 20/-	वार्षिक	: 250/-
पांच वर्ष	: 1100/-	आजीवन	: 2500/-

विदेश में वार्षिक शुल्क : 3100/-

अनुक्रमणिका

क्रम सं.	विषय	पृष्ठ
1.	संपादकीय : राम के देश में...	2
2.	समय का सदुपयोग जीवन...	3
3.	यः प्राणतो निमिषतः	4-5
4.	मनु स्मृति और धर्म	6-7
5.	यज्ञैश्वर्यम्	8-9
6.	वेद की आज्ञाओं के...	10
7.	भूमिदेव्याः किं वयः	11
8.	महापुरुषों को नमन...	12-13
9.	वैदिक परिवार	14-15
10.	सत्संग : बिनु सत्संग...	18
11.	समाचार-सूचनाएं	22
12.	सुस्वास्थ्य : तुलसी कई बीमारियों...	24

पाठकवृंद : कृपया स्वयं समाज एवं राष्ट्र के उत्थान के लिए 'विश्ववारा संस्कृति' के आजीवन सदस्य बनकर जीवन पथ को पुष्पित, प्रफुल्लित और प्रमुदित करें। आपका चित्र पत्रिका में प्रकाशित होगा। आपके बहुमूल्य सुझावों का हम स्वागत करते हैं।

लेखकवृंद से अनुरोध है कि रचना मौलिक एवं अप्रकाशित हो, रचना का लेखन स्पष्ट और सुपाठ्य हो। दो प्रतियां उस रचनाकार को भेज दी जाएगी, जिनकी रचना प्रकाशित हुई है।

विज्ञापन दर

पिछला कवर पृष्ठ	:	5100 रुपये
कवर पृष्ठ नं.-2	:	3100 रुपये
कवर पृष्ठ नं.-3	:	2500 रुपये
पूरा पृष्ठ अंदर	:	1000 रुपये
आधा पृष्ठ अंदर	:	600 रुपये

'विश्ववारा संस्कृति' में सभी पद अवैतनिक हैं। प्रकाशित विचारों से संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का न्याय क्षेत्र गौतमबुद्धनगर होगा।

संपादकीय कार्यालय

आर्य समाज, बी-69,
सेक्टर-33, नोएडा- 201301
गौतमबुद्धनगर, (उ.प्र.)
दूरभाष : 0120-2505731,
9871798221

Web : www.aryasamajnoida.org, E-mail : info.aryasamajnoida33@gmail.com

संपादकीय...

।। ओ३म् ।।

राम के देश में : बलात्कारियों की फौज

भारत देश में आश्रम व्यवस्था की व्यवस्था ऋषियों को इसलिए की कि एक स्वस्थ मानव एवं समाज का निर्माण किया जा सके। ऋषियों के प्रतिपादित सिद्धांत के अनुसार जीवन का पहला आश्रम ब्रह्मचर्य आश्रम है। ब्रह्मचर्य की तीन अवस्थाएं हैं वसु, रुद्र और आदित्य। हमारी संस्कृति एवं शास्त्रों में ब्रह्म के अनेक अर्थ मिलते हैं जिसमें ईश्वर, वेद, ज्ञान, विद्या प्रमुख हैं।

ब्रह्मचारी का अर्थ होता है जो ईश्वर की उपासना में रहता हुआ अपने मन, इंद्रियों पर संयम रखता हुआ विद्या प्राप्ति में रत रहता हो। हमारे देश में गृहस्थ आश्रम को भी भोग का साधन नहीं संतान प्राप्ति का साधन माना है।

इसलिए अंग्रेजी में कहा गया है-

Wealth is lost nothing is lost
if health is lost something is lost but if
character is lost everything is lost.

शिवाजी व गौरभानु की कथा हमारे देश के नागरिकों के लिए संदेश देती है। गौरभानु एक सुंदर महिला थी। वीर शिवाजी की दृष्टि उस पर पड़ी, वे उसे देखने लगे, गौरभानु भी शिवाजी को देखकर प्रसन्न हुई और बोली क्या देख रहे हो आप जो कहोगे मैं करने के लिए तैयार हूं। लेकिन वीर शिवाजी ने उत्तर दिया मैं यह देख रहा हूं कि यदि इतनी सुंदर मेरी मां होती हो मैं कितना सुंदर होता। ऐसे विचार हमारे वीरों के थे। इस श्रेणी में अनेक महापुरुषों के नाम आते हैं, जिनके जीवन को देखकर मन आनंदित हो जाता है। जैसे- मर्यादा पुरुषोत्तम राम, वीर हनुमान, योगेश्वर श्रीकृष्ण, महर्षि दयानन्द सरस्वती आदि जिन्होंने अपना सर्वस्व राष्ट्र को सपर्पित कर, समस्त विश्व को चरित्र की शिक्षा दी।

लेकिन वर्तमान में हमारे देश में विभिन्न पदों पर बैठे लोग अपने चरित्र और महापुरुषों के आदर्श पर ध्यान ही नहीं दे रहे हैं और दिन-प्रतिदिन बलात्कार की घटनाएं हो रही हैं। जिससे गौरवशाली देश को शर्मसार होना पड़ रहा है। इसलिए तो हमारे महापुरुषों ने उपदेश दिया है कि वेद मार्ग पर चलने वाला व्यक्ति ही उत्तम और चरित्रवान राष्ट्र का निर्माण कर सकता है और अच्छी व्यवस्था समाज और राष्ट्र को दे सकता है।

■ **आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार**

ऋषियों के प्रतिपादित सिद्धांत के अनुसार जीवन का पहला आश्रम ब्रह्मचर्य आश्रम है। ब्रह्मचर्य की तीन अवस्थाएं हैं वसु, रुद्र और आदित्य। हमारी संस्कृति एवं शास्त्रों में ब्रह्म के अनेक अर्थ मिलते हैं जिसमें ईश्वर, वेद, ज्ञान, विद्या प्रमुख हैं। ब्रह्मचारी का अर्थ होता है जो ईश्वर की उपासना में रहता हुआ अपने मन, इंद्रियों पर संयम रखता हुआ विद्या प्राप्ति में रत रहता हो। हमारे देश में गृहस्थ आश्रम को भी भोग साधन नहीं संतान प्राप्ति का साधन माना है। वर्तमान में हमारे देश में विभिन्न पदों पर बैठे लोग अपने चरित्र और महापुरुषों के आदर्श पर ध्यान ही नहीं दे रहे हैं और दिन-प्रतिदिन बलात्कार की घटनाएं हो रही हैं। जिससे गौरवशाली देश को शर्मसार होना पड़ रहा है। इसलिए तो हमारे महापुरुषों ने उपदेश दिया है कि वेद मार्ग पर चलने वाला व्यक्ति ही उत्तम और चरित्रवान राष्ट्र का निर्माण कर सकता है और अच्छी व्यवस्था समाज और राष्ट्र को दे सकता है।

समय का सदुपयोग जीवन का सबसे बड़ा गुण है

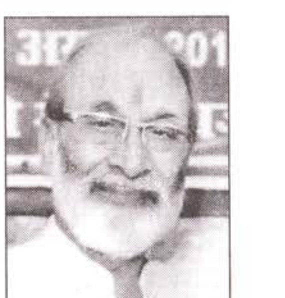

आर्य कै. अशोक गुलाटी
प्रबंध संपादक

समय के सदुपयोग से ही मनुष्य जीवन शुभ और पवित्र बनता है। जीवन नश्वर है तो इसका यह अर्थ नहीं कि समय को नष्ट किया जाए। अपितु, इससे तो हमें यह प्रेरणा लेनी चाहिए कि इस अमूल्य निधि को व्यर्थ न जाने दें और समय का सदुपयोग करते हुए इससे अधिकाधिक लाभ उठाएं। जीवन में सफलता का रहस्य भी यही है कि निश्चित समय पर निश्चित कर्म किया जाए

मानव जीवन में समय का बहुत महत्व है। कहावत भी है- समय से पहले भाग्य से ज्यादा किसी को कुछ नहीं मिलता। इसलिए समय का ध्यान रखते हुए सभी कार्य उचित समय पर पूरा करें और जीवन को श्रेष्ठ बनायें।

समय मानव जीवन की सबसे मूल्यवान संपत्ति है। इसके सदुपयोग से संसार में हर प्रकार की सफलता प्राप्त की जा सकती है, सारे सुख, वैभव खरीदे जा सकते हैं। दिन, रात, मास और वर्ष व्यतीत हो रहे हैं और समय भागता जा रहा है। यह समय घोड़े के समान तीव्र गति से भागता रहता है। कितना ही इसके पीछे दौड़ो, जो समय निकल गया सो निकल गया, फिर वह वापस नहीं आ सकता।

इस मंत्र में काल अर्थात समय के अनेक गुण बताए हैं। जिस प्रकार सूर्य सात रंगों के साथ प्रकाशमान रहता है, उसी प्रकार काल भी प्रकाशमान है। जिस प्रकार सूर्य की सत्ता संसार में प्रमुख है उसी प्रकार काल की महत्ता भी मान्य है। काल के सैकड़ों नेत्र हैं जो हर समय हम सबको देखते रहते हैं। कालचक्र में सैकड़ों धुरे हैं उसी के सहारे संसार सतत् गतिमान है। काल सदा एक समान रहता है और अत्यंत बलशाली है।

संसार के सभी कार्य देश और काल की सीमा में बंधकर होते हैं। परमात्मा और आत्मा को छोड़कर शेष सभी वस्तुएं काल के बंधन में बंधी हुई हैं। केवल ज्ञानवान और बुद्धिमान व्यक्ति ही काल रूपी घोड़े पर सवारी कर सकते हैं अर्थात् जिनका जीवन में कोई उच्च लक्ष्य होता है वही समय का सदुपयोग करके काल को भी परास्त कर सकते हैं।

समय धन से भी अधिक मूल्यवान है। संसार के सभी पदार्थों में समय का महत्व सर्वोपरि है। जो समय के महत्व को समझते हैं वे उसे कभी भी नष्ट नहीं करते। जो समय को नष्ट करता है, समय उसे ही नष्ट कर देता है। समय शुभ जीवन और लक्ष्मी का भंडार होता है। समय के सदुपयोग से ही मनुष्य जीवन शुभ और पवित्र बनता है। जीवन नश्वर है तो इसका यह अर्थ नहीं कि समय को नष्ट किया जाए। अपितु, इससे तो हमें यह प्रेरणा लेनी चाहिए कि इस अमूल्य निधि को व्यर्थ न जाने दें और समय का सदुपयोग करते हुए इससे अधिकाधिक लाभ उठाएं। जीवन में सफलता का रहस्य भी यही है कि निश्चित समय पर निश्चित कर्म किया जाए। पर आज जिसे देखो वह समय बरबाद करता रहता है। हर काम 'समय काटने' के उद्देश्य से करता है। आलस, निद्रा, गप्पबाजी में समय व्यतीत करता है और कहता है कि बड़े व्यस्त हैं। यदि अब भी हम वास्तविकता से आंखें मूंदे रहेंगे तो यह काल हमें कुचल देगा।

'काल करे सो आज कर, आज करै सो अब' की दृष्टि अपनानी चाहिए। कल किसने देखा है। भविष्य कभी भविष्य के रूप में नहीं आता। वह तो प्रतिक्षण हमें वर्तमान के रूप में ही प्राप्त होता है। अत: जो वर्तमान का लाभ उठा लेता है वह मानों स्वयं अपने भविष्य का निर्माण करता है तथा कालजयी बन जाता है।

वेदमंत्र उपदेश करता है-

कालो अश्वो वहति सप्तरश्मिः,
सहस्राक्षो अजरो भूरिरेताः।
तमा रोहन्ति कवयो विपश्चितस्तस्य
चक्रा भुवनानि विश्वा॥

(अथर्व वेद 19/53/1)

जो भी समय निकल जायेगा वह फिर कभी लौटकर नहीं आयेगा। समय बड़ा बलवान है। इसलिए सदैव समय का सदुपयोग करें।

समय का महत्व बताते हुए कबीरदास जी कहते हैं-

कल करे सो आज कर, आज करे सो अब।
पल में प्रलय होयेगी बहुरि करेगा कब॥

जब समय बीत जायेगा तो कुछ भी नहीं मिलेगा। इसलिए समय का सदुपयोग मानव जीवन का सर्वश्रेष्ठ गुण बताया गया है। ○○

यः प्राणतो निमिषतः

स्व. प्रो. उमाकान्त उपाध्याय

इस अंक से ईश्वर स्तुति, प्रार्थना, उपासना के चौथे मंत्र की व्याख्या प्रस्तुत की जा रही है, मनन चिन्तन कर जीवन सफल करें।

- प्रबंध संपादक

जीवन एक दुर्लभ तत्व है। मानव जीवन तो और भी दुर्लभ वस्तु है- 'दुर्लभ मानुष जनम है देह न बारम्बार। तरुवर ज्यों पत्ता झरै, बहुरि न लागे डार।।' मनुष्य से उच्च पवित्र अधिक सात्विक योनियां हैं और मानव जीवन से नीचे अधिक तामसी योनियां भी हैं-

'देवत्वं सात्विका यान्ति, मनुष्यत्वं च राजसाः।
तिर्यक्त्वं तामसा नित्य, मित्येषा त्रिविधा गतिः।।'

मनु. १२-४०

जो सात्विक मनुष्य हैं, वे उत्तम देवकोटि को प्राप्त होते हैं। जो मध्यम कोटि के कम सात्विक, अधिक राजसीगुण वाले हैं वे मनुष्य योनि और जिनमें तमोगुण अधिक होता है वे नीच गति तिर्यक योनि-पशु-पक्षी, कीट, पतंग, वृक्ष-लता आदि की योनियों में जाते हैं।

जीवन की ये विचित्र पहेलियां हैं। जीवात्मा का स्वभाव 'सच्चित्' बताया जाता है। आत्मा 'चित्' है, उसमें चेतना है। किंतु यह चेतना 'प्राण' और 'चेष्टा' के माध्यम से प्रकट होती है। निम्न मंत्र के चिंतन में 'प्राण-चेष्टा-जीवन' का सुयोग प्रस्तुत हुआ है-

'यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतोबभूव। य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम।' -यजु. ३३-१३

मंत्र को चिंतन की सुविधा की दृष्टि से निम्न खंडों में विभाजित कर लेते हैं।

(१) यः (परमेश्वरः) प्राणतः निमिषतः जगतः -जो परमेश्वर प्राणवाले, निमेष वाले, जगत् का।

(२) महित्वा एक इत् राजा बभूव - (जो परमेश्वर) अपनी महिमा के कारण इस प्राणवाले निमेषवाले संसार का निस्संदेह एक राजा है।

(३) यः अस्य द्विपदः चतुष्पदः ईशे- जो परमेश्वर इस जगत् में द्विपद-चतुष्पद, जड़ चेतन सब पर शासन करता है (अपनी महिमा से)।

(४) कस्मै देवाय हविषा विधेम - सुखस्वरूप सकल ऐश्वर्य के देने वाले परमात्मा की भक्ति अपनी सकल उत्तम सामग्री अर्पित करके करें।

अब प्रत्येक खंड पर व्याख्यात्मक चिंतन प्रस्तुत करते हैं-

1. यः प्राणतः निमिषतः जगतः- जो प्राणवाले, निमेषोन्मेष वाले, आंख आदि से चेष्टा करने वाले संसार का राजा है।

हमारा शरीर है तो माटी का पुतला ही- **'भस्मान्तं शरीरम्'** यह अंत में मिट्टी में ही मिल जायेगा। यह मिट्टी का पुतला भी प्राणों का सम्पर्क पाते ही संसार की सर्वाधिक मूल्यवान् वस्तु बन जाता है। कल्पना कीजिए कहीं आग लग गई, वहां धन सम्पत्ति भी है और एक नन्हा मुन्ना भी है।

शिशु छोटा है, जीयेगा, या नहीं, कमाने वाला सुयोग्य बनेगा भी या क्या? किंतु सारे हीरे जवाहरात एक ओर, नन्हा-मुन्ना प्राणी एक ओर। सारी अनिश्चितता के बावजूद, अनिश्चित जीवन, अनिश्चित योग्यता वाले प्राणी का, प्राणवाले का, प्राणतः का मूल्य कहीं अधिक है, अतुलनीय रूप से अधिक है। यह है महिमा प्राण की, अन्यथा शरीर तो है ही माटी का पुतला। प्राणों का सम्पर्क पाकर मिट्टी अमूल्यवान बन गई।

नास्तिक सोचता है और मानता-विश्वास भी करता है-

'माटी का तन, माटी का मन, क्षण भर जीवन, मेरा परिचय।'

नास्तिक के लिए न अध्यात्म है और न है प्रभु की कृपा जन्य आध्यात्मिक

हमारा शरीर है तो माटी का पुतला ही- 'भस्मान्त शरीरम्' यह अंत में मिट्टी में ही मिल जायेगा। यह मिट्टी का पुतला भी प्राणों का सम्पर्क पाते ही संसार की सर्वाधिक मूल्यवान् वस्तु बन जाता है। कल्पना कीजिए कहीं आग लग गई, वहां धन सम्पत्ति भी है और एक नन्हा मुन्ना भी है। शिशु छोटा है, जीयेगा, या नहीं, कमाने वाला सुयोग्य बनेगा भी या क्या? किंतु सारे हीरे जवाहरात एक ओर, नन्हा-मुन्ना प्राणी एक ओर। सारी अनिश्चितता के बावजूद, अनिश्चित जीवन, अनिश्चित योग्यता वाले प्राणी का, प्राणवाले का, प्राणतः का मूल्य कहीं अधिक है, अतुलनीय रूप से अधिक है। यह है महिमा प्राण की, अन्यथा शरीर तो है ही माटी का पुतला। प्राणों का सम्पर्क पाकर मिट्टी अमूल्यवान बन गई। नास्तिक सोचता है और मानता-विश्वास भी करता है- 'माटी का तन, माटी का मन, क्षण भर जीवन, मेरा परिचय।' नास्तिक के लिए न अध्यात्म है और न है प्रभु की कृपा जन्य आध्यात्मिक उपलब्धि। प्रभु भक्त का आध्यात्मिक दृष्टिकोण सारे चितन की दिशा बदल देता है। हमारा शरीर है तो मिट्टी ही, और अंत में इसकी परिणति भी मिट्टी ही है, किंतु प्राण तत्व का स्पर्श होते ही यह अमूल्य, बहुमूल्य, मिट्टी का अन्य रूप बन जाती है। सड़ी गली मिट्टी गुलाब की कली, मिश्री की डली बन जाती है।

उपलब्धि। प्रभु भक्त का आध्यात्मिक दृष्टिकोण सारे चिंतन की दिशा बदल देता है। हमारा शरीर है तो मिट्टी ही, और अंत में इसकी परिणति भी मिट्टी ही है, किंतु प्राण तत्व का स्पर्श होते ही यह अमूल्य, बहुमूल्य, मिट्टी का अन्य रूप बन जाती है। सड़ी गली मिट्टी गुलाब की कली, मिश्री की डली बन जाती है। मानव चोले का तो पूछना ही क्या? अपनी मिट्टी की विशेषताओं पर मुग्ध होकर भक्त प्रभु भक्ति में मगन होकर अपनी मिट्टी की सराहना करने लगता है-

'मेरी मिट्टी! मैं बलि जाऊं। मुझे पात्र में परिणत पाऊं।। तू ही मेरी चांदी सोना, आघातों से खिन्न न होना। रूप बनेगा सुघर सलोना, पहले पिंड बनाऊं।।

मेरी मिट्टी मैं बलि जाऊं। चले पिता का चक्र नियम से, भली भांति मैं भाऊं।।

मेरी मिट्टी मैं बलि जाऊं। फिर भी तुझको तपना होगा, क्लेशों से न कल्पना होगा। यों मङ्गल घट अपना होगा, भर धर धर घर आऊं। मेरी मिट्टी मैं बलि जाऊं।।

-श्री मैथिलीशरण गुप्त रचित

प्राण विचित्र तत्व है। आत्मा के साथ जब प्राण का सम्पर्क प्रभु की महिमा से होता है तो आत्मा का, अमर आत्मा का जीवन प्रारम्भ होता है। जीवति, प्राणति, ये सारे प्रयोग सप्राण आत्मा के लिए होते हैं। निष्प्राण आत्मा अजर-अमर हो सकता है। किंतु जीवन तो तभी आता है जब प्रभु प्राणों के साथ आत्मा को जोड़ देते हैं।

प्र पूर्वक अनु प्राणने से शतृ प्रत्यय करके षष्ठी एक वचन में प्राणतः प्रयोग बनेगा। इसी प्रकार नि+मिष्+शतृ षष्ठी एकवचन में निमिषतः प्रयोग सिद्ध होगा। निमिषतः का सीधा सा अर्थ हुआ 'नेत्रादिना चेष्टतां कुर्वतः।' सो निमिषतः का अर्थ हुआ नेत्रादि ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों से चेष्टा करने वालों का।

प्राणतः का अर्थ हुआ 'प्राणवालों का' और निमिषतः का अर्थ हुआ 'ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय' से चेष्टा करने वालों का।' प्राणों के अभाव में सामान्य रूप से चेष्टाएं नहीं हो सकतीं। प्राणतः निमिषतः 'ब्राह्मण वशिष्ठ न्याय' जैसा लगता है। वशिष्ठ कहने से ब्राह्मण तो समझा ही जायेगा। निमिषतः चेष्टां कुर्वतः कहने से प्राणतः तो समझा ही जायेगा।

किंतु इस मंत्र में प्राणतः का प्रयोग कुछ अधिक, शायद बहुत अधिक भाव को समेटे हुए है। ऊर्जा खनिज में भी पाई जाती है। मैं विज्ञान का विद्यार्थी नहीं हूं। किंतु ऊर्जा से संबंधित दो सूत्र प्रस्तुत करने का मन हो रहा है-

(i) $E=MC^2$, (ii) E=ho और f=c/o

हम सूत्रों में नहीं उलझना चाहते किंतु चेष्टा, ऊर्जा की समस्या से सम्मुखीन होना होता है।

ऋषि ने अर्थ करते हुए 'प्राणतः का प्राण वाले, निमिषतः का अप्राणि रूप जगत का' अर्थ करके चिंतन के आयाम को अत्यधिक विस्तृत कर दिया है। क्या प्राणतः और निमिषतः का आयाम अप्राणिरूप जगत् ऊर्जा, प्रकाश, शब्दतरंग, चुम्बकत्व, रेडियो धर्मिता आदि-आदि को अपने में समेट रहा है?

प्राण आदि को एक मंत्र पर विचार कीजिए- **'प्राणः प्रजा अनुवस्ते पिता पुत्रमिव प्रियम्। प्राणो हि सर्वस्येश्वरो यच्च प्राणति यच्च न।।'** -अथर्व. ११-४-१०

अर्थात्- प्राण पिता है, पालक है, रक्षक है। सारी प्रजाएं (प्रकर्षेण जायन्ते इति प्रजाः) जड़चेतन, प्राणी अप्राणी, सभी को पुत्र की तरह प्रिय है। प्राण सम्पूर्ण प्रजाओं का, सृष्टि का, ईश्वर है 'यच्च प्राणति यच्च न' जो प्राणति अर्थात् श्वास लेता है और यच्च न प्राणति अर्थात् जो श्वास नहीं लेते जैसे खनिज जगत्। वनस्पतियों में श्वसन क्रिया, आक्सीजन, नाइट्रोजन का लेना छोड़ना, साधारण अनुभव है। प्रजनन भी है ही। प्रश्नोपनिषद् का भी एक श्लोक द्रष्टव्य है-

'प्राणस्येदं वशे सर्वं त्रिदिवे यत् प्रतिष्ठितम्। मातेव पुत्रान् रक्षस्व श्रीश्च प्रजां च विधेहि न इति।' २-१३

तीनों लोकों में पृथ्वी, द्यौ, अंतरिक्षलोक में जो कुछ भी प्रतिष्ठित है अस्तित्व में है, वह सब प्राण के नियंत्रण में है। हे प्राण! जैसे माता अपने पुत्रों की रक्षा करती है, वैसे हमें श्री शोभा आभा क्रांति और प्रज्ञा, मेधा बुद्धि दो।

प्राण और चेष्टा को ध्यान में रखकर एक तालिका बनाने का प्रयास कर रहे हैं।

अ- खनिज जगत्- अधिकतम जड़ता, अधिक तम तमस् के परमाणु, न्यूनतम सत्व और रजस के परमाणु, जड़ता, गतिहीनता चयापचय, ठोस घनत्व में कालक्रम से शिथिलता और स्वरूप परिवर्तन।

आ-वनस्पति जगत्- अधिकतम तमस्, जड़ता से मुक्ति, प्राण श्वसन का प्रारम्भ, प्रजनन (या पुनरुत्पादन) रज शुक्र, स्थानीय उपकरण (गर्भ केसर-पराग केसर), जाति विभाग, अंतर क्रियाएं, जन्म यौवन वार्धक्य (सस्यमिवमर्त्यः पच्यते सस्यमिव जायते पुनः) किसी-किसी वनस्पति में ज्ञान कर्म इंद्रियों का कुछ अधिक विकास, उदाहरणार्थ छुईमुई में स्पर्श, डसोरा में स्पर्श-रसना की उपलब्धि इत्यादि।

ई-पशुजगत्- पर्याप्त तमस्+ रजस्+ न्यूनतम सत्व, प्राण, श्वसन, संचलन, ज्ञान-कर्म, इंद्रियां, काम-क्रोध आदि का सुस्पष्ट अभिज्ञान, न्यूनतम विवेक, संघ प्रवृत्ति, आनुवांशिकता की सहज उपलब्धि, शारीरिक अंतर क्रियाओं का मानव से समता इत्यादि।

(शेष अगले अंक में) ○○

सुधी पाठकों से आत्म निवेदन

कृपया अपने विचारों से अवश्य अवगत करावें ताकि पत्रिका को और सुरुचिपूर्ण बनाने का प्रयास किया जाए।

■ **प्रबंध संपादक : 9871798221**

मनु स्मृति और धर्म

डा. दीवान चन्द, डी.लिट.

हमारे धार्मिक साहित्य में श्रुति का स्थान सबसे ऊंचा है। इससे उतर कर स्मृति का स्थान समझा जाता है। वेद के आदेश देश और काल की सीमाओं से ऊपर हैं- वे सार्व भौम और नित्य हैं। स्मृतियां देश और काल की स्थिति को देखकर बनायी जाती हैं। परिवर्तन जीवन का चिन्ह है; स्मृतियों के आदेशों में वेद का होना स्वाभाविक ही है। स्मृतियों में मनुस्मृति बहुत प्रसिद्ध है।

स्मृति को धर्मशास्त्र भी कहा जाता है। धर्म के अंतर्गत नीति और राजनीति दोनों आ जाते हैं। इन दोनों में घनिष्ठ संबंध हैं। दोनों का लक्ष्य मानव-कल्याण है : नीति बताती है कि इस लक्ष्य की सिद्धि के लिए व्यक्ति को क्या करना चाहिए; राजनीति बताती है कि इस संबंध में समुदाय सामूहिक स्थिति में क्या कर सकता है।

राजनीति राज्य की नीति है। अन्य स्मृतियों की तरह मनु स्मृति में भी नीति और राजनीति दोनों मिले हुए हैं। दूसरे देशों के साहित्य में भी यही स्थिति है। पीछे दोनों अलग हो जाती हैं, और स्वाधीन धाराओं के रूप में सामानान्तर बहने लगती हैं। कुछ लोगों के विचार में नीति राजनीति के विरोध में प्रतिक्रिया का रूप धारण करती हैं।

मैं अपने कल्याण के लिए एक मार्ग को उपयोगी समझता हूं; इसी कल्याण के लिए राज्य जो निश्चित करता है, वह मेरे विचार के प्रतिकूल होता है। प्रत्येक राष्ट्र समझता है कि युद्ध होने पर उसका अधिकार है कि वह हरेक योग्य नागरिक को युद्ध में झोंक दे। व्यक्ति ख्याल कर सकता है कि किसी स्थिति में भी उसे अहिंसा का त्याग नहीं करना चाहिए। उसके लिए प्रश्न उठ खड़ा होता है कि वह राज्य नियम को मानें या आत्मा के आदेश को सुनें।

मनुस्मृति के संबंध में हम नीति और राजनीति दोनों को ध्यान में रखेंगे, और देखेंगे कि इन दोनों क्षेत्रों के संबंध में यह 'धर्म' ही बाबत क्या कहती है।

नीति : नीति के प्रमुख प्रश्न ये हैं- १. धर्म और अधर्म, शुभ और अशुभ में मौलिक भेद क्या है? २. हम इस भेद को कैसे जानते हैं। ३. धर्म के प्रमुख आकार-प्रकार क्या हैं!

मौलिक भेद : एक विचार के अनुसार व्यक्ति की अपनी पसंद ही मौलिक भेद है; जो कुछ मुझे किसी विशेष स्थिति में आता है, वह मेरे लिए शुभ है; जो मेरे साथी को आता है, वह उसके लिए शुभ है। इस विचार के अनुसार दो मनुष्यों में शुभ-अशुभ बाबत मतभेद हो ही नहीं सकता; वे अपनी-अपनी चेतना की बाबत कहते हैं, किसी एक वस्तु की बाबत नहीं कहते।

प्राचीन यूनान में साफिस्ट समुदाय का यह विचार था। वे सत्य को भी व्यक्ति का इंद्रिय-दत्त बोध ही समझते थे। सुकरात का सारा यत्न यह बताना था कि सत्य और शुभ दोनों में सामान्य अंश विद्यमान है। जो कुछ मेरे लिए और आज सत्य है, वह सबके लिए और सदा सत्य है; जो मेरे लिए और आज शुभ है, वह सबके लिए और सदा शुभ है। शुभ और अशुभ का भेद वस्तुगत है।

जब हम भले और बुरे में भेद करते हैं तो हमारे ध्यान में करता, लक्ष्य या कर्म होते हैं। प्राचीन यूनान में लक्ष्य विचार का विषय था; वे अंतिम लक्ष्य नि:श्रेयस या परम शुभ की बाबत जानना चाहते थे। इस ज्ञान के बाद शुभ और अशुभ कर्मों का भेद कठिन समस्या नहीं रहता; जो कर्म नि:श्रेयस की सिद्धि का साधन है, वह ऐसा साधन होने के कारण ही अच्छा कर्म है। आधुनिक काल में जर्मनी के दार्शनिक कांट ने कर्तव्य कर्म को महत्व दिया। उसने ऐसे कर्म की जांच के लिए सूत्र प्रस्तुत किए और कहा कि कर्तव्य पालन का फल, जो कुछ भी वह हो, ऐसा फल होने के कारण शुभ होता है। भारतीय दर्शन में आम विचार यूनानी विचार से मिलते हैं। मनुस्मृति में दृष्ट कर्म, आचरण को महत्व दिया है।

१:१०८ में कहा है-'आचार: परमो धर्म:'- वेद में कहा है कि सृष्टि के साथ ही परमात्मा ने ऋत् और सत्य को भी निर्मित किया। सत्य वस्तुगत जगत् में

स्मृतियों में मनुस्मृति बहुत प्रसिद्ध है। स्मृति को धर्मशास्त्र भी कहा जाता है। धर्म के अंतर्गत नीति और राजनीति दोनों आ जाते हैं। इन दोनों में घनिष्ट संबंध हैं। दोनों का लक्ष्य मानव-कल्याण है : नीति बताती है कि इस लक्ष्य की सिद्धि के लिए व्यक्ति को क्या करना चाहिए; राजनीति बताती है कि इस संबंध में समुदाय सामूहिक स्थिति में क्या कर सकता है। राजनीति राज्य की नीति है। अन्य स्मृतियों की तरह मनु स्मृति में भी नीति और राजनीति दोनों मिले हुए हैं। दूसरे देशों के साहित्य में भी यही स्थिति है। पीछे दोनों अलग हो जाती हैं, और स्वाधीन धाराओं के रूप में सामानान्तर बहने लगती हैं। कुछ लोगों के विचार में नीति राजनीति के विरोध में प्रतिक्रिया का रूप धारण करती है। मैं अपने कल्याण के लिए एक मार्ग को उपयोगी समझता हू; इसी कल्याण के लिए राज्य जो निश्चित करता है, वह मेरे विचार के प्रतिकूल होता है। प्रत्येक राष्ट्र समझता है कि युद्ध होने पर उसका अधिकार है कि वह हरेक योग्य नागरिक को युद्ध में झोंक दे।

कारण-कार्य का व्यापक नियम है; प्रत्येक कार्य किसी कारण का फल होता है। कर्मों के संबंध में ऋत् ऐसा नियम है; प्रत्येक कर्म का फल कर्ता को भोगना पड़ता है। तथ्य तो यह है कि किसी कर्म की पूर्णता होती ही उस समय है, जब उसका फल कर्ता के सिर पर आ गिरता है परमात्मा का वज्र पाप के विनाश में, जल्दी नहीं करता, परंतु यह विलम्ब भी नहीं करता। मनुस्मृति (४:१७४) में कहा है- धर्म का फल कुछ समय के लिए अच्छा दिखता है, परंतु उचित समय आने पर वह उसी तरह विनष्ट हो जाता है, जिस तरह जड़ कटा वृक्ष नष्ट हो जाता है।

हनन किया हुआ धर्म हनन करने वाले का नाश कर देता है; रक्षा किया हुआ धर्म रक्षा करता है। इसलिए धर्म का हनन नहीं करना चाहिए, इस भय से कि धर्म हनन करने वाले का नाश कर देगा। यह इस लोक में धर्म की स्थिति है। परलोक की बाबत स्मृति (8:16) में कहा है कि मनुष्य जिन वस्तुओं के मोह में जकड़ा रहता है, वे सब जीवन-काल के साथ हैं; मृत्यु के बाद केवल धर्म ही मनुष्य के साथ जाता है। मनुष्य का अंतिम उद्देश्य मोक्ष की प्राप्ति है। इसके लिए एक जीवन ही पर्याप्त काल नहीं। वर्तमान जीवन लंबी यात्रा की एक अल्प मंजिल है। हमारे लिए उचित यही है कि जहां किसी मंजिल को आरम्भ करें, उससे कुछ आगे उसे समाप्त करें। जीवन की कमाई में धर्म ऐसी कमाई है, जो हमारे साथ जायेगी। 'धर्म-प्रधान पुरुष ही, तप की सहायता से पापों से विमुक्त होकर परलोक में परमात्मा को प्राप्त करता है।'

८:१४ में कहा है- हनन किया हुआ धर्म हनन करने वाले का नाश कर देता है; रक्षा किया हुआ धर्म रक्षा करता है। इसलिए धर्म का हनन नहीं करना चाहिए, इस भय से कि धर्म हनन करने वाले का नाश कर देगा। यह इस लोक में धर्म की स्थिति है। परलोक की बाबत स्मृति (८:१६) में कहा है कि मनुष्य जिन वस्तुओं के मोह में जकड़ा रहता है, वे सब जीवन-काल के साथ हैं; मृत्यु के बाद केवल धर्म ही मनुष्य के साथ जाता है। मनुष्य का अंतिम उद्देश्य मोक्ष की प्राप्ति है। इसके लिए एक जीवन ही पर्याप्त काल नहीं।

वर्तमान जीवन लंबी यात्रा की एक अल्प मंजिल है। हमारे लिए उचित यही है कि जहां किसी मंजिल को आरम्भ करें, उससे कुछ आगे उसे समाप्त करें। जीवन की कमाई में धर्म ऐसी कमाई है, जो हमारे साथ जायेगी। 'धर्म-प्रधान पुरुष ही, तप की सहायता से पापों से विमुक्त होकर परलोक में परमात्मा को प्राप्त करता है।' (४:२४३)

धर्म का ज्ञान कैसे प्राप्त होता है? जन्म के साथ ही ज्ञान-प्राप्ति का काम आरम्भ हो जाता है, और जो साधारण मनुष्यों की हालत में जीवन के अंत तक चलता जाता है। किसी मनुष्य के लिए यह एक रोचक परंतु कठिन प्रश्न है कि उसने कितना समय सीखने में व्यय किया है। मनुस्मृति के अनुसार, इस समय को चार भागों में बांटा जा सकता है- आगम काल, स्वाध्याय काल, प्रवचन काल और व्यवहार काल। आगम काल में हम बाहर से उपलब्ध ज्ञान को प्राप्त करते हैं। हमारी आंखें जाग्रत में प्राय: खुली रहती हैं, कान तो बंद होते ही नहीं। स्पर्श निरंतर होता ही है। जो अनुभव इस तरह प्राप्त होता है, वह हमारे ज्ञान का केंद्र होता है; हम इसे वास्तविकता या सत्य का प्रतीक समझते हैं।

आगम में ही वह ज्ञान भी आ जाता है, जो हमें माता-पिता, शिक्षकों और अन्य मनुष्यों से प्राप्त होता है। स्वाध्याय में हमारी वृत्ति केवल ग्रहण करने की नहीं होती; हम विशेष प्रकार के ज्ञान को ढूंढ़ने जाते हैं। कालेज के विद्यार्थी का स्पष्ट सम्पर्क तो ५-७ शिक्षकों से ही होता है, परंतु कालेज के पुस्तकालय में सहस्रों लेखकों के विचार उसकी पहुंच में होते हैं; वह अपने लिए चुनाव करता है। प्रवचन में हम किसी भले पुरुष के सम्पर्क में आते हैं, वह हमें तथ्यों की ही बाबत नहीं, अपितु नैतिक और धार्मिक नियमों की बाबत भी बताता है। यह नियम इंद्रिय-दत्त ज्ञान का भाग नहीं होते हैं, यह प्राय: स्वाध्याय औ: प्रवचन से प्राप्त किये जाते हैं। चौथा काल व्यवहार-काल है। व्यवहार में व्यक्ति ग्रहण ही नहीं करता, आदान-प्रदान में भाग लेता है। धर्म के संबंध में भी हम इस साधनों का प्रयोग नहीं करते हैं। जब मनुष्य को नैतिक समस्याओं की बाबत सोचने का अवसर आता है तो उसकी बुद्धि का कुछ विकास हो चुकता है। यदि उसने समाज कल्याण या सर्वहित को परम शुभ स्वीकार किया है, तो उसकी बुद्धि उसे बताती है कि कोई विशेष काम इस कल्याण का पोषक है या धारक है। बुद्धि का परामर्श हर एक को प्राप्य होता है।

यदि समस्या जटिल हो या व्यक्ति को ख्याल हो कि निर्णय करने में वह स्वार्थ को एक ओर नहीं रख सकेगा, और संभव है कि भाव के शोर में बुद्धि की धीमी आवाज सुनाई ही न दें, तो किसी भले पुरुष से सहायता लेनी पड़ती है। यहां ज्ञान और आचरण में भेद हो सकते हैं। एक मनुष्य को नैतिक और धार्मिक विषयों का अच्छा ज्ञान है, परंतु उसका आचरण उसके ज्ञान के साथ आगे नहीं बढ़ा, यह त्रुटियों से विमुक्त नहीं। दूसरी ओर शुद्ध आचरण का मनुष्य बुद्धिमत्ता में साधारण स्तर पर भी स्थित हो सकता है। यदि इन दोनों में चुनना हो तो सदाचार को प्राथमिकता देनी चाहिए।

(शेष अगले अंक में) ○○

यज्ञैश्वर्यम्

देव नारायण भारद्वाज
'वरेण्यम' अवंतिका-1, अलीगढ़

लाठी के सहारे वे तीन कौन आ रहे हैं। तीन बूढ़े है, एक परिवार के द्वार पर आकर खड़े हो गये। 'भज ओंकारम्, भज ओंकारम्, ओंकारम् भज मोदमते' बोलकर उन्होंने ध्वनि को गुंजायमान कर दिया। सुनकर स्फूर्तिवती नव पुत्रवधू बाहर आकर खड़ी हो गयी। पुत्रवधू अंग्रेजी पढ़ी-लिखी है, उसकी ही क्या आजकल तो फेरी लगाने वाले भी टीवी, मोबाइल की शिक्षा से बात-बात में हिंदी के साथ अंग्रेजी की टांग अवश्य तोड़ते हैं।

इसी प्रवृति के अनुसार नववधू ने परिचय की दृष्टि से उन तीनों से क्रमश: पूंछ लिया- (ह्वाट्स एयोर नेम सर) श्रीमन् आपका शुभ नाम क्या है? उन्होंने भी आधुनिकता का परिचय देते हुए उत्तर दिया तथा नाम बताने आरम्भ कर दिये। प्रथम ने कहा मेरा नाम पीपी है। दूसरे ने कहा मेरा नाम भी पीपी है और तीसरे ने बताया- बेटी मेरा नाम भी पीपी है। इतनी वार्ता सुनकर नववधू की सासू मां भी बाहर निकल आईं। उन्होंने तीनों बूढ़ों को प्रणाम किया। नववधू की वार्ता भंग हो गई तीनों बूढ़ों ने वार्ता की नईलय इस प्रकार प्रकट की।

मां जी हम तीनों भूखे हैं, भोजन करना चाहते हैं। गृहणी ने कहा- 'महाशय! आप तीनों भीतर पधारें। हमें आप लोगों को अपने आंगन में बैठाकर भोजन कराने में पड़ी प्रसन्नता होगी।' तीनों ने मना करते हुए कहा- 'हम तीनों के मध्य एक समझौता है, तीनों में से कोई एक ही किसी के घर में जा सकता है। 'ऐसा क्यों श्रीमान?' अचंभित गृहणी ने व्यग्रता के साथ पूछां। उन्हांने उत्तर दिया- आपकी पुत्रवधू ने अंग्रेजी में परिचय पूछा था-सो हमन अंग्रेजी में उत्तर दे दिया था, क्योंकि हम तीनों का नाम पीपी, पीपी, पीपी है। अब आपको हिंदी में स्पष्ट करते हैं- हम तीनों के नाम क्रमश: प्रगति प्रकाश, प्रफुल्ल प्रकाश और प्रेम प्रकाश है। आप तीनों में से किसी एक को अपने घर में बुला सकती हो।' यह सुनकर गृह स्वामिनी असमंजस में पड़ गयी। उसने तीनों वृद्धों से क्षण भर प्रतिक्षा करने को कहा और इस बीच उसने अपने पति से परामर्श कर लिया और बड़ी मनुहार के साथ प्रेम प्रकाश को घर के भीतर आने को बुलावा दिया। सोचा यह गया कि और कुछ नहीं-सम्पूर्ण घर प्रेम के प्रकाश से परिपूर्ण हो जाये।

गृहणी ने देखा कि प्रेम प्रकाश के आगे बढ़ते ही दूसरे दोनों बूढ़े भी उसके साथ ही घर में प्रवेश करने लगे। गृहणी ने उन्हें टोंका- हमने तो प्रेम प्रकाश को बुलाया, आप दोनों क्यों आ रहे हैं? दोनों ने एक साथ उत्तर दिया- तुम और तुम्हारा पति दोनों बड़े समझदार हो। तुमने प्रगति प्रकाश या प्रफुल्ल प्रकाश को न्योता होता, तो शेष दोनों बाहर ही खड़े रहते, लेकिन प्रेम प्रकाश का साथ हम कभी नहीं छोड़ते, वह जहां भी जाते हैं हम दोनों उनके पीछे-पीछे चल पड़ते हैं। अस्तु हम दोनों को भी अंदर आना ही होगा। गृहणी ने कहा- ठीक है आप अवश्य ही पधारें- हमारी तो पहले से ही यही अभिलाषा थी। आप तीनों का स्वागत है। इधर तीनों बूढ़ों ने अंदर प्रवेश किया, उधर गृहपति ने यज्ञवेदी से उठकर सामगानपूर्वक अतिथियों का स्वागत किया।

प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिवं प्रियम्।
अग्ने रथं न वेद्यम॥ साम. ५।।

'अनन्त योनियों में मनुष्य ही वह योनि है जिसे दश अंगुलियों वाले दो कर मिले हैं। इन करों की सार्थकता दया, दान और दक्षिणा से ही है। यदि इन करों ने अपनी थाली के ग्रास को किसी भूखे प्राणी के मुख तक नहीं पहुंचाया, यदि इन करों ने किसी दुखिया के जख्मों पर मरहम नहीं लगाया, यदि इन करों ने किसी दीन-दरिद्र के सिर को नहीं सहलाया और इन करों ने समाज और राष्ट्र के हित कुछ दान नहीं किया, तो इनका होना व्यर्थ है। इसी अभ्यास के लिए ही तो हाथ को सीधा रखवाकर यज्ञाग्नि में आहुति दिलाई जाती है। उस समय हाथ को कोहनी से घुमाकर मुख की ओर नहीं लाया जाता।' आचार्यों के महा आचार्य स्वामी, समर्पणानन्द ने स्वार्थ से ऊपर ईर्ष्या-विजय पर बल दिया है। वे अपने ग्रंथ 'पञ्चयज्ञ प्रकाश' में व्यक्त करते हैं। 'यज्ञ-भावना का सबसे बड़ा शत्रु ईर्ष्या है। ईर्ष्या भी वास्तव में स्वार्थ का ही रूपान्तर है। यह उद्देश्य-प्रणिधान ईर्ष्या पर विजय में किस प्रकार सहायक होता है, यह दृष्टांत से समझाया जा सकता है।

इस वेदी पर धन्य पधारे। प्यारे-प्यारे अतिथि हमारे॥ थी हमें तुम्हारी अभिलाषा। थी शक्ति न थी ऐसी आशा।

परमश्रेष्ठ हैं प्रिय यथेष्ठ हैं, हुए सुगंधित सदन हमारे। प्यारे-प्यारे अतिथि हमारे॥ उन पर अपना हृदय लुटाए। और वंदना क्या हम गाये। स्नेह सखा सा लेकर आये, नारायण इस नर के द्वारे। प्यारे-प्यारे अतिथि हमारे॥

हो उठी सुगंधित वेदी है, दे रही ज्ञान बहु भेदी है। चमक गये सब देव उपस्थित, पाकर प्रिय आदर्श तुम्हारे। प्यारे-प्यारे अतिथि हमारे॥

(साम.श्रद्धा-देवातिथि)

गृहस्वामी द्वारा स्वागत में गाये गये गायत्री गीत को सुनकर तीनों बूढ़ों ने क्रमशः अपनी प्रतिक्रिया प्रस्तुत की। प्रगति प्रकाश जी बोल पड़े- इस सामगान गायत्री के प्रथम पद 'श्रेष्ठ वो अतिथिं स्तुषे' को आपने मेरे लिए बोला है- इसी को देवपूजा या देव स्तुति कहते हैं। इसकी धारणा से ही गृह-समाज व राष्ट्र में सर्व प्रगति के द्वार खुलते हैं। स्तुति के द्वारा ही लक्ष्यों का निर्धारण होता है। ठीक है तो दूसरा मध्यवर्ती पद 'मित्रमिवप्रियम्' आपने मेरे लिए बोला है- प्रेम प्रकाश जी बोल पड़े। स्वाभाविक स्नेह स्वार्थ भावना से ऊपर उठकर किये जाने के कारण व्यक्ति सबका प्रिय बनता है, ठीक है। तत्काल प्रफुल्ल प्रकाश जी बोल पड़े- मंत्र का अंतिम पद बचा है, और तीनों बूढ़ों में मैं बचा हूं। इसका तथ्य भी मेरे ही कथ्य को प्रकट करता है। 'अग्ने रथं न वेद्यम्' जीव मात्र को वे प्रभु ही (अग्ने-अग्निम) आगे ले चलने वाले हैं। 'रथं न वेद्यम्' रथ की भांति जानने योग्य हैं। जिस प्रकार रथ से यात्रा भी प्रभु रूप महारथ पर आश्रितः होने पर ही पूर्ण होती है। प्रभु जो समृद्धि प्रदान करते हैं, उसे आप पात्रजनों को दान करके प्रफुल्ल प्रकाश बन जाते हैं। हमें अपने नाम पर गर्व है।

जैसे कोई भी व्यक्ति अपने हिमाद्रि (शीतल शांत सिर) से पहचाना जाता है, किंतु उसके व्यक्तित्व व चरित्र की पहचान उसके दोनों हाथ व इनके मध्य में स्थित हृदय से होती है, वैसे ही व्यक्ति के हृदय में प्रेम प्रकाश और उसके पार्श्ववर्ती दोनों हाथों में प्रगति प्रकाश एवं प्रफुल्ल प्रकाश हो तो वह व्यक्ति सम्पूर्णतया यज्ञ पुरुष अथवा राष्ट्र पुरुष बन जाता है। वेद व्याख्या ग्रंथ शतपथ ब्राह्मण इस कथन का समर्थन करता प्रतीत होता है। वह कहता है- 'यज्ञो वै विष्णुः'- यज्ञ साक्षात विष्णु है। 'विष्णुः वै राष्ट्रः'- इस विष्णु का प्रत्यक्ष व्यवहार्थ स्वरूप बना दीं, और चारों में शंख-चक्र-गदा एवं पद्म (कमल) पकड़ा दिये, जो स्वमेव अपनी भूमिका का प्रदर्शन करने लगे।

ज्ञान से ही भूमि से व्योम तक शंख (शांति), कर्म के चक्रमण द्वारा समृद्धि, गदा स्वरूप शस्त्राभ्यास से राष्ट्ररक्षण और नितांत श्रमशीलता के श्वेद-सरोवर में कमल खिलते हैं। इसी स्वाभाविक एवं शैक्षणिक अभ्यास के सूत्रधार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र उपाधिधारी राष्ट्र की प्रतिष्ठित भुजायें हैं। पूर्वकाल की भांति आज भी योग्यता-क्षमता-दक्षता अर्जित कर कोई भी व्यक्ति किसी भी पद-प्रतिष्ठा को प्राप्त कर लेता है। इसी पारस्परिक सहयोग-समन्वय की पृष्ठभूमि को स्वामी दीक्षानन्द सरस्वती ने अपने ग्रंथ 'अग्निहोत्र सर्वस्व' में यों व्यक्त किया है-

'अनन्त योनियों में मनुष्य ही वह योनि है जिसे दश अंगुलियों वाले दो कर मिले हैं। इन करों की सार्थकता दया, दान और दक्षिणा से ही है। यदि इन करों ने अपनी थाली के ग्रास को किसी भूखे प्राणी के मुख तक नहीं पहुंचाया, यदि इन करों ने किसी दुखिया के जख्मों पर मरहम नहीं लगाया, यदि इन करों ने किसी दीन-दरिद्र के सिर को नहीं सहलाया और इन करों ने समाज और राष्ट्र के हित कुछ दान नहीं किया, तो इनका होना व्यर्थ है। इसी अभ्यास के लिए ही तो हाथ को सीधा रखवाकर यज्ञाग्नि में आहुति दिलाई जाती है। उस समय हाथ को कोहनी से घुमाकर मुख की ओर नहीं लाया जाता।' आचार्यों के महा आचार्य स्वामी, समर्पणानन्द ने स्वार्थ से ऊपर ईर्ष्या-विजय पर बल दिया है। वे अपने ग्रंथ 'पञ्चयज्ञ प्रकाश' में व्यक्त करते हैं। 'यज्ञ-भावना का सबसे बड़ा शत्रु ईर्ष्या है। ईर्ष्या भी वास्तव में स्वार्थ का ही रूपान्तर है। यह उद्देश्य-प्रणिधान ईर्ष्या पर विजय में किस प्रकार सहायक होता है, यह दृष्टांत से समझाया जा सकता है। ○○

सुखी जीवन का रहस्य

- जो है, उसी में सुखी रहे, जो नहीं उसमें दुखी नहीं।
- जो स्वयं ही पुरुषार्थी है, वही अनुकूल और सुखद होता है।
- जड़ पदार्थों का सदुपयोग एवं प्राणियों के साथ सदव्यवहार ही ईश्वर की पूजा है।
- श्रद्धा से किया गया कर्म भी सुख देता है, उसका फल भी सुख देता है।
- दिन में ऐसे कर्म करें, कि रात्रि में सुख से सो सकें।
- माता-पिता, भाई-बहन की उपेक्षा करना प्रभु की कृपा को ठुकराना है।
- माता-पिता, गौ, वेद, गायत्री, गीत का पाठ करने से तथा घर में यज्ञ करने से निश्चय ही सुख मिलता है।

वेद की आज्ञाओं के उलंघन का भयंकर परिणाम हो सकता है

भारत की दुर्गति के पीछे वेद की आज्ञाओं का उलंघन ही था

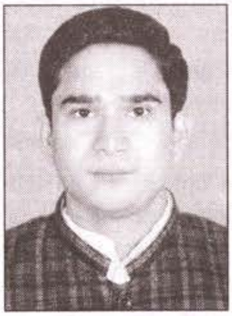

ओमकार शास्त्री
संस्कृत प्रवक्ता, आर्ष गुरुकुल, नोएडा

वेद दुनिया की सबसे प्राचीन पुस्तक है। वेद रूपी ज्ञान परमात्मा द्वारा ऋषियों के अंत:करण में दिया गया जिससे मनुष्य सभी व्यवस्थाओं को वेद के अनुसार चला सकें। लेकिन ऐसा नहीं हुआ और हमने वेद की आज्ञा का उल्लंघन किया इसलिए मानव समाज में दुराचार, अत्याचार, व्यसनों में मानव समाज फंसता गया और फंसता चला जा रहा है। वेद की आज्ञाएं निम्न हैं-

पहली आज्ञा : अक्षैर्मा दिव्य:।

(ऋ १०/३४/१३)

अर्थात् 'जुआ मत खेलो।' इस आज्ञा का उलंघन हुआ। इस आज्ञा का उलंघन धर्मराज कहे जाने वाले युधिष्ठर ने किया।

परिणाम : एक स्त्री का भरी सभा में अपमान। महाभारत जैसा भयंकर युद्ध जिसमें लाखों, करोड़ों योद्धा और हज़ारों विद्वान मारे गए। आर्यवर्त पतन की ओर अग्रसर हुआ।

दूसरी आज्ञा : मा नो निद्रा ईशत मोत जल्पि: (ऋ ८/४८/१४)

अर्थात् 'आलस्य, प्रमाद और बकवास हम पर शासन न करें।' लेकिन इस आज्ञा का भी उलंघन हुआ। महाभारत के कुछ समय बाद भारत के राजा आलस्य प्रमाद में डूब गये।

परिणाम : विदेशियों के आक्रमण। धर्म के नाम पर अंधविश्वास का पाखंड फैल जाना।

तीसरी आज्ञा : सं गच्छध्वं सं वद्ध्वम (ऋ १०/१९१/२)

अर्थात् 'मिलकर चलो और मिलकर बोलो।' वेद की इस आज्ञा का भी उलंघन हुआ। जब विदेशियों के आक्रमण हुए तो देश के राजा मिलकर नहीं चले। बल्कि कुछ ने आक्रमणकारियों का ही सहयोग किया।

परिणाम : लाखों लोगों का कत्ल, लाखों स्त्रियों के साथ दुराचार, अपार धन-धान्य की लूटपाट, गुलामी।

चौथी आज्ञा : कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो में सव्य आहित:

(अथर्व ७/५०/८)

अर्थात् 'मेरे दाएं हाथ में कर्म है और बाएं हाथ में विजय।' वेद की इस आज्ञा का उलंघन हुआ। लोगों ने कर्म को छोड़कर ग्रहों फलित ज्योतिष आदि पर आश्रय पाया।

परिणाम : कर्महीनता, भाग्य के भरोसे रहकर आक्रान्ताओं को मुंहतोड़ जवाब न देना। धन-धान्य का अपव्यय, मनोबल की कमी और मानसिक दरिद्रता।

पांचवीं आज्ञा : उतिष्ठत सं नह्यध्वमुदारा: केतुभि: सह। सर्पा इतरजना रक्षांस्य मित्राननु धावत।। (अथर्व ११/१०/१)

अर्थात् 'हे वीर योद्धाओ! आप अपने झंडे को लेकर उठ खड़े हो और कमर कसकर तैयार हो जाओ। हे सर्प के समान क्रुद्ध रक्षाकारी विशिष्ट पुरुषों! अपने शत्रुओं पर धावा बोल दो।' वेद की इस आज्ञा का भी उलंघन हुआ। जब लोगों के बीच बुद्ध और जैन मत के मिथ्या अहिंसावाद का प्रचार हुआ। लोग आक्रमणकारियों को मुंहतोड़ जवाब देने की बजाय मिथ्या अहिंसावाद को मुख्य मानने लगे।

परिणाम : अशोक जैसे महान योद्धा का युद्ध न लड़ना। विदेशियों के द्वारा इसका फायदा उठाकर भारत पर आक्रमण।

छठी आज्ञा : मिथो विघ्नाना उप यन्तु मृत्युम (अथर्व ६/३२/३)

अर्थात् 'परस्पर लड़ने वाले मृत्यु का ग्रास बनते हैं और नष्ट-भ्रष्ट हो जाते हैं।' वेद की इस आज्ञा का उलंघन हुआ।

परिणाम : भारत के योद्धा आपस में ही लड़-लड़कर मर गये और विदेशियों ने इसका फायदा उठाया।

सातवीं आज्ञा : न तस्य प्रतिमा अस्ति

(यजुर्वेद ३२/३)

अर्थात् 'ईश्वर का कोई प्रतिमा नहीं है।' लेकिन इस आज्ञा का भी उलंघन हुआ और लोगों ने ईश्वर को एक देशी मूर्ति तक समेट दिया।

परिणाम : ईश्वर के सत्य स्वरूप को छोड़कर भिन्न स्वरूप की उपासना और सत्य धर्म को भुला देना। मंदिर में ढेर सारा धन आदि जमा हो जाना जो न धर्म रक्षा मे लगता है न अभाव गरीबी दूर करने में।

तो आइये, फिर से वेदों की ओर लौट चलें... और एक सशक्त राष्ट्र और चरित्रवान विश्व का निर्माण करें।

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

OO

भूमिदेव्याः किं वयः

प्रो. ए. आर. वासुदेवमूर्तिः

शतं वर्षाणि जीवेयम्' इति मानवः आ प्राचीनकालात् अपि अपेक्षां कुर्वन् एव अस्ति। अद्यापि ज्येष्ठाः कनिष्ठान् 'शतं जीव शरदो वर्धमानः' इत्येवम् आशीषा अनुगृह्णन्ति। मनुष्यः शत-वर्षात्मकेन कालेन स्वस्य इहलोक यात्रां समापयति। नदी पर्वतादयः सागरवनादयः च सुदीर्घेण कालेन अत्र वसन्ति इति सः जानाति। यावत् मानवकुलं भूलोके सञ्चारारम्भम् अकरोत् ततः बहुपूर्वम् एव-तन्नाम ततः कोटयधिकवर्षेभ्यः पूर्वं एव-पशु-पक्षी-उरग-सरीसृपादयः कीटब्याक्टीरिया-वैरस्-प्रभृतयः, तृण-सस्य-वृक्षादयः च अत्र आसन्।

तदा कश्चन प्रश्चः उदियात्- एवं तर्हि सर्वाधारभूतायाः भूमिदेव्याः वयः किं स्यात् इति। एषः कुतूहलकारी प्रश्चः अस्मत्पूर्वजान् अपि बाधते स्म एव। अतएव ते एतस्य उत्तरम् अपि सहस्त्राधिकवर्षेभ्यः पूर्वं एव अन्विष्टवन्तः आसन्। अस्मदीया साम्प्रदायिककालगणना वदति- भूमेः ४५०,००,००,००० वर्षाणि प्रायः अतीतानि इति।

एततस्य शतकस्य द्वितीयदशकान्तं यावत् (१९२० तमवर्षान्तं यावत्) पाश्चात्यविद्वांसः विज्ञानिनः वा- 'भूमिः ४५० कोटिवर्षेभ्यः पूर्वं उद्भूता' इत्येतं वादं न पुरस्कुर्वन्ति स्म। ते भारतीयं विचारं निराकुर्वन्तः उपहसन्ति स्म। पाश्चात्यधर्मग्रन्थाः वदन्ति यत् भूमिः ४१०० वर्षेभ्यः पूर्वम् जाता इति। एतस्मिन् कथने विश्वासं कुर्वन्तः ते तथा व्यवहरन्ति स्म । किन्तु इदानीं सस्यप्राणिप्रभृतीनां या शिलात्वप्राप्ति प्रक्रिया अस्ति सा तेषां विचारे परिवर्तनम् आनीतवती अस्ति।

एतां शिलात्वप्राप्तिप्रक्रियाम् अवलम्ब्य विज्ञानिनः केचन उक्तवन्तः आसन् यत् ३०-४० कोटिवर्षेभ्यः पूर्वं तेषां शिलादीनाम् उत्पतिः आसीत् इति। किन्तु बहवः अत्र सम्पत्तिं न प्रदर्शयन्ति स्म।

'युरेनियंनामकस्य धातोः परमाणवः विदलनं प्राप्य सीसकधातुपरमाणु- रुपेण परिवर्तिताः भवन्ति' इत्येतं विचारम् एतस्य शतकस्य आदौ प्रतिपादितवन्तः परमाणुविज्ञानिनः। एतादृशं परमाणुपरिवर्तनं ४५० कोटिवर्षेभ्यः पूर्वं प्रवृत्तम् इति ते स्वाभिप्रायं प्रकटितवन्तः सन्ति। एतावता प्राप्तेषु परीक्षाक्रमेषु एषः परमाणुपरिवर्तनपरीक्षाक्रमः एव निर्दुष्टः इति तु प्रमाणसिद्धम् अस्ति।

मनुष्यः शत-वर्षात्मकेन कालेन स्वस्य इहलोकयात्रां समापयति। नदीपर्वतादयः सागरवनादयः च सुदीर्घेण कालेन अत्र वसन्ति इति सः जानाति। यावत् मानवकुलं भूलोके सञ्चारारम्भम् अकरोत् ततः बहुपूर्वम् एव-तन्नाम ततः कोटयधिकवर्षेभ्यः पूर्वम् एव- पशु-पक्षि-उरग-सरीसृपादयः कीटब्याक्टीरिया-वैरस्-प्रभृतयः, तृण-सस्य-वृक्षादयः च अत्र आसन्। तदा कश्चन प्रश्चः उदियात्- एवं तर्हि सर्वाधारभूतायाः भूमिदेव्याः वयः किं स्यात् इति। एषः कुतूहलकारी प्रश्चः अस्मत्पूर्वजान् अपि बाधते स्म एव। अतः एव ते एतस्य उत्तरम् अपि सहस्त्राधिकवर्षेभ्यः पूर्वम् एव अन्विष्टवन्तः आसन्। एतां शिलात्वप्राप्तिप्रक्रियाम् अवलम्ब्य विज्ञानिनः केचन उक्तवन्तः आसन् यत् 30-40 कोटिवर्षेभ्यः पूर्वं तेषां शिलादीनाम् उत्पतिः आसीत् इति। किन्तु बहवः अत्र स्मपतिं न प्रदर्शयन्ति स्म।

एतं 'Radio Actic' क्रमं अवलम्ब्य विज्ञानिभिः बेङ्गरूनगरं परितः स्थितेषु प्रदेशेषु विद्यमानानां शिलानां वयसः परिगणनं कृतं। तासु शिलासु सीसक-युरेनियं-धात्वोः परिमाणं परिशील्य ते तासां वयः परिगणितवन्तः। तदा तासाम् उत्पत्तिकालः, ततः भूसेः उत्पत्तिकालः च तैः ज्ञातः।

विज्ञानिभिः आधुनिकपरिक्षानन्तरं भूमेः वयः यत् उक्तं (४५० कोटिवर्षाणि इति) तत् अस्मत्पूर्वजैः कथं वा सहस्त्राधिकवर्षेभ्यः पूर्वम् एव ज्ञातम्? वस्तुतः एषः अंशः आश्चर्यजनकः कुतूहलवर्धकः च अस्ति य् अस्मत्पूर्वजाः कालगणनाक्रमं यम् अनुसरन्ति स्म सः अपि कुतूहलकारी एव अस्ति। नेत्रक्ष्मस्पन्दं (निमेषं) मूलमानत्वेन परिगणयन्तः ते मुहूर्त-दिन-मास-वर्षादीन् युग-महायुग-कल्प-मन्वन्तरादीन् च कल्पयन्तः सृष्टयारम्भकालं निर्णितवन्तः सन्ति। विष्णुपुराणं, मनुस्मृतिः, अर्थशास्त्रं, महाभारतम्, अमरकोषः इत्यादिषु एतत्सम्बद्धानि विवरणानि उपलभ्यन्ते।

पाश्चात्यदेशेषु गेलिलियोतः (१५६-१६४०) पूर्वं पल (सेकेंड)- परिमाणात् अल्पतरः कालः एव न आसीत्। गेलिलियो तव ऐदम्प्राथम्येन पल (सेकेंड) परिमाणं परिचायितवान्। अस्मत्पूर्वजाः तु ततः बहु पूर्वम् एव १/५ सेकेंड, १/५०० सेकेंड इत्यादीन् कालभागान् कल्पयन्तः भूमेः वयः अपि निर्णीतवन्तः आसन्। पूर्वजानाम् एषा अपूर्वा सिद्धिः आश्चर्यम् अभिमानं च जनयति खलु अस्मासु? ○○

वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। - *महर्षि दयानन्द सरस्वती*

शिक्षक दिवस : डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन

जन्म दिवस
शत्-शत् नमन

महान व्यक्तित्व डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन के जन्मदिवस को हर साल शिक्षक दिवस के रूप में मनाया जाता है। वह अध्यापन पेशे के प्रति अध्याधिक समर्पित थे। ये कहा जाता है कि एक बार कुछ विद्यार्थियों द्वारा 5 सितंबर को उनका जन्मदिन मनाने के लिये उनसे आग्रह किया, इस पर उन्होंने कहा कि मेरा जन्मदिन मनाने के बजाय आप सभी को शिक्षकों के उनके महान कार्य और योगदान के लिये शिक्षकों को सम्मान देने के लिये इस दिन को शिक्षक दिवस के रूप में मनाना चाहिये। शिक्षक ही देश के भविष्य के वास्तविक आकृतिकार होते है अर्थात् देश का उज्जवल भविष्य विद्यार्थियों के बेहतर विकास से ही संभव है। देश में रहने वाले नागरिकों के भविष्य निर्माण के द्वारा शिक्षक राष्ट्र-निर्माण का कार्य करते है। लेकिन समाज में कोई भी शिक्षकों और उनके योगदान के बारे में नहीं सोचता था। लेकिन ये सारा श्रेय भारत के एक महान नेता डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन को जाता है जिन्होंने अपने जन्मदिन को शिक्षक दिवस के रूप में मनाने की सलाह दी। 1962 से हर वर्ष 5 सितंबर को शिक्षक दिवस के रूप में मनाया जाता है। शिक्षक हमें सिर्फ पढ़ाते ही नहीं है बल्कि वो हमारे व्यक्तित्व, विश्वास और कौशल स्तर को भी सुधारते हैं। वो हमें इस काबिल बनाते हैं कि हम किसी भी कठिनाई और परेशानियों का सामना कर सकें। हमें अपने जीवन में शिक्षक के द्वारा पढ़ाये गये सभी पाठ का अनुसरण करना चाहिये।

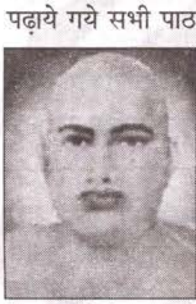

स्मृति दिवस
11 मई, शत्-शत् नमन

स्वामी श्री दर्शनानन्द सरस्वती

स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज का सम्पूर्ण जीवन एक आदर्श सन्यासी के रूप में गुजरा। उनका परमेश्वर में अटूट विश्वास एवं दर्शन शास्त्रों के स्वाध्याय से उन्नत हुई तर्क शक्ति बड़ों-बड़ों को उनका प्रशंसक बना लेती थी। संस्मरण उन दिनों का हैं जब स्वामी जी के मस्तिष्क में ज्वालापुर में गुरुकुल खोलने का प्रण हलचल मचा रहा था। एक दिन स्वामी जी हरिद्वार की गंगनहर के किनारे खेत में बैठे हुए गाजर खा रहे थे। किसान अपने खेत से गाजर उखाड़कर, पानी से धोकर बड़े प्रेम से खिला रहा था। उसी समय एक आदमी वहां पर से घोड़े पर निकला। उसने स्वामी जी को गाजर खाते देखा तो यह अनुमान लगा लिया की यह बाबा भूखा हैं। उसने स्वामी जी से कहा बाबा गाजर खा रहे हो भूखे हो। आओ हमारे यहां आपको भरपेट भोजन मिलेगा। स्वामी जी ने उसकी बातों को ध्यान से सुनकर पहचान कर कहा तुम ही सीताराम हो, मैंने सब कुछ सुना हुआ हैं। तुम्हारे जैसे पतित आदमी के घर का भोजन खाने से तो जहर खाकर मर जाना ही अच्छा हैं। जाओ मेरे सामने से चले जाओ। स्वामी जी को आर्यजगत् हमेशा याद करता रहेगा। गुरुकुल दनकौर, सिकंदराबाद उन्हीं की देन है।

स्वामी श्री दीक्षानन्द सरस्वती

स्मृति दिवस
15 मई, शत्-शत् नमन

जनमानस को मंत्रमुग्ध करने वाले उपदेशों एवं व्याख्याओं से प्रभावित भक्तों के आग्रह पर स्वामी जी ने सर्वप्रथम 'स्वाध्याय-सर्वस्व' नामक लघु-ग्रंथ लिखा। इस लघु ग्रंथ पर पं. मोहन विद्यालंकार अमर स्वामी, स्वामी विद्यानंद विदेह की उत्साहजनक सम्मतियों ने स्वामी जी को अपने विचारों को कलमबद्ध करने के लिए प्रोत्साहित किया और मृत्युञ्जय सर्वस्व, उपनयन सर्वस्व, अग्निहोत्र सर्वस्व, उपहार सर्वस्व, दो पुटन के बीच, सत्यार्थ कल्पतरु, उद्देश्य सर्वस्व आदि अनेक ग्रंथों का प्रणयन हुआ। प्रवचन और साहित्य प्रचार का मुख्य आधार हैं, यह सोचकर वैदिक-साहित्य निर्माण में अपने नाम को सार्थक करते हुए स्वयं को दीक्षित कर दिया। उक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए अपने गरुवर्य के नाम से समर्पण शोध संस्थान की स्थापना की। विद्यार्थी काल से ही स्वामी जी संस्था स्थापित करने में रुचि रखते थे। अत: भटिंडा में उपदेशक विद्यालय की स्थापना कर डाली। पुन: स्वामी समर्पणानन्द जी के आदेश से गुरुकुल प्रभात आश्रम को इस प्रकार चलाया जैसा कि संस्थापक ही हों। आर्ष गुरुकुल नोएडा की नींव रखने में व अंतिम समय में अंतिम व्याख्यान व आशीर्वाद का सौभाग्य हमें प्राप्त हुआ। अग्निहोत्री ट्रस्ट हर वर्ष उनकी स्मृति में विशेष कार्यक्रम और विद्वानों को सम्मानित करता है। इनके द्वारा देशहित में किए गए कार्यों के लिए समस्त आर्यजगत ऋणी रहेगा।

स्वामी श्री रामेश्वरानन्द सरस्वती

स्मृति दिवस
18 मई, शत्-शत् नमन

स्वामी रामेश्वरानन्द सरस्ती जी आर्य समाज के तेजस्वी संन्यसी थे । आप उच्चकोटि के वक्ता थे तथा उतम विद्वान व विचारक थे । 1890 मे आप का जन्म एक क्रष्क परिवार में हुआ। आप आरम्भ से ही मेधावी होने के साथ ही साथ विरक्त व्रति के थे। आप उच्च शिक्षा न पा सके गांव में ही पाठशाला की साधारण सी शिक्षा प्राप्त की। आरम्भ से ही विरक्ति की धुन के कारण आप शीघ्र ही घर छोड़ कर चल दिए तथा काशी जा पहुंचे। यहां पर आप ने स्वामी कृष्णानन्द जी से संन्यास की दीक्षा ली। संन्यासी होने पर भी आप कुछ समय पौराणिक विचारों में रहते हुए इसका ही अनुगमन करते रहे किन्तु कुछ समय पश्चात ही आपका झुकाव आर्य समाज की ओर हुअ। आर्य समाज में प्रवेश के साथ ही आप को विद्या उपार्जन की धुन सवार हुई तथा आप गुरुकुल ज्वालापुर जा पहुंचे तथा आचार्य स्वामी शुद्ध बोध तीर्थ जी से संस्कृत व्याकरण पढ़ा। यहां से आप खुर्जा आए तथा यहां के निवास काल में दर्शन शास्त्र का अध्ययन किया। काशी में रहते हुए आप ने की शास्त्रों का गहन व विस्तृत अध्ययन किया। इस प्रकार आपका अधययन का कार्य 21 वर्ष का रहा, जो 1935 ईश्वी में पूर्ण किया। स्वामी जी ने भारतीय स्वाधीनता संग्राम में भी खूब भाग लिया।

जन्म दिवस
28 मई, शत्-शत् नमन

विनायक दामोदर वीर सावरकर

वीर सावरकर का जन्म 28 मई 1883 को भारत के महाराष्ट्र राज्य के नाशिक जिले के भांगुर गाव में हुआ था इनके पिता का नाम दामोदर पन्त सावरकर और माता का नाम राधाबाई था जब वीर सावरकर महज 9 साल के ही थे तो इनकी माता का हैजे की बीमारी से देहांत हो गया था और फिर माता की मृत्यु के पश्चात 7 साल बाद प्लेग जैसी भयंकर बीमारी के फैलने के कारण इनके पिता भी इस दुनिया को छोड़कर चले गये फिर इनका लालन पालन इनके बड़े भाई गणेश और नारायण दामोदर सावरकर तथा बहन नैनाबाई के देखरेख में हुआ बचपन से वीर सावरकर पढ़ने-लिखने में तेज थे जिसके चलते आर्थिक तंगी के बावजूद इनके भाई ने इन्हें पढ़ने के लिए स्कूल भेजा फिर इसके पश्चात 1901 में वीर सावरकर ने शिवाजी हाईस्कूल से नासिक से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण किया बचपन से ही लिखने का शौक रखने वाले वीर सावरकर ने अपने पढ़ाई के दौरान कविताएं भी लिखना शुरू कर दिया था। इसके पश्चात इनका विवाह सन 1901 में ही यमुनाबाई के साथ हुआ जिसके बाद इनके आगे की पढाई का खर्च की जिम्मेदारी इनके ससुर ने उठाया। जिसके बाद इन्होने पुणे के फग्रयुसन कालेज से बीए की पढाई पूरी किया और पाने इसी पढाई के दौरान वीर सावरकर ने आजादी के लिए उस समय के युवा राजनेता बाल गंगाधर तिलक, बिपिन चन्द्र पाल, लाला लाजपत राय जैसे नेताओं से प्रेरणा मिली।

क्रांतिकारी श्यामजी कृष्ण वर्मा

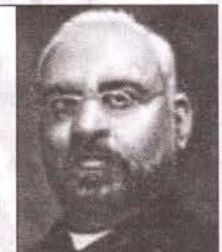

पुण्य तिथि
31 मई, शत्-शत् नमन

श्यामजी कृष्ण वर्मा एक भारतीय क्रांतिकारी, वकील और पत्रकार थे। वो भारत माता के उन वीर सपूतों में से एक हैं जिन्होंने अपना सारा जीवन देश की आजादी के लिए समर्पित कर दिया। इंग्लैंड से पढ़ाई कर उन्होंने भारत आकर कुछ समय के लिए वकालत की और फिर कुछ राजघरानों में दीवान के तौर पर कार्य किया पर ब्रिटिश सरकार के अत्याचारों से त्रस्त होकर वो भारत से इंग्लैण्ड चले गये। वह संस्कृत समेत कई और भारतीय भाषाओं के ज्ञाता थे। उनके संस्कृत के भाषण से प्रभावित होकर मोनियर विलियम्स ने वर्माजी को ऑक्सफोर्ड में अपना सहायक बनने के लिए निमंत्रण दिया था। उन्होंने 'इंडियन होम रूल सोसाइटी', 'इंडिया हाउस' और 'द इंडियन सोसिओलोजिस्ट' की स्थापना लन्दन में की थी। इन संस्थाओं का उद्देश्य था वहां रह रहे भारतीयों को देश की आजादी के बारे में अवगत कराना और छात्रों के मध्य परस्पर मिलन एवं विविध विचार-विमर्श। श्यामजी ऐसे प्रथम भारतीय थे, जिन्हें ऑक्सफोर्ड से एम.ए. और बार-एट-ला की उपाधियां मिलीं थीं। श्यामजी कृष्ण वर्मा का जन्म 4 अक्टूबर 1857 को गुजरात के माण्डवी कस्बे में हुआ था। पिता का नाम श्रीकृष्ण वर्मा और माता का नाम गोमती बाई था। जब बालक श्यामजी मात्र 11 साल के थे तब उनकी माता का देहांत हो गया जिसके बाद उनका लालन-पालन उनकी दादी ने किया। 31 मई को जिनकी पुण्यतिथि है। इनके द्वारा देश हित में किये गये कार्यों के लिए देश इनका सदैव ऋणी रहेगा। महर्षि दयानन्द के वह मानस पुत्र थे।

वैदिक परिवार

डॉ. शशि प्रभा कुमार

वैदिक संस्कृति में पारिवारिक आदर्श की सुंदर परिकल्पना की गई है। परिवार ही व्यक्ति की सामाजिकता क प्रथम सोपान है। व्यक्ति से परिवार और परिवार से समाज बनता है, अत: सुखी समाज के निर्माण के लिए पहले व्यक्ति और फिर परिवार के निर्माण की आवश्यकता होती है। इसी दृष्टि से वेद में व्यक्ति के साथ-साथ परिवार की मर्यादाओं और कर्तव्यों का निर्देश किया गया है।

परिवार का मूल आधार विवाह संस्कार एवं गृहस्थ आश्रम है और वैदिक विवाह-पद्धति में 'सप्तपदी' की क्रिया आदर्श गृहस्थ-जीवन का एक कार्यक्रम प्रस्तुत करती है। तद्नुसार पहला पद 'अन्न' के लिए (इषे एकपदी), दूसरा पद 'बल' के लिए (ऊर्जे द्विपदी), तीसरा पद 'धन' एवं 'ज्ञान' के लिए (रायस्पोषाय त्रिपदी), चौथा पद 'सुख' के लिए (मयोभवाय चतुष्पदी), पांचवां पद 'संतान' के लिए (प्रजाभ्य: पञ्चपदी), छठा पद 'ऋतुओं' के लिए (ऋतुभ्य: षट्पदी) तथा सातवां पद 'मित्रता' के लिए (सखे सप्तपदी) रखा जाता है। विवाह शब्द की व्याख्या 'विशेषेण विविधं वाह: विवाह:' है अर्थात् विशेष रूप से विविध कर्तव्यों का वहन ही विवाह है।

स्पष्टत: यहां विवाह भोग-विलास के लिए नहीं, गृहस्थ-धर्म के पालन के लिए विहित है। गृहस्थ को आश्रम कहा जाता है और आश्रम शब्द 'आ समन्तात् श्रम: यत्र स आश्रम:, गृहस्थे आश्रम: गृहस्थाश्रम:' इस भाव को प्रकट करता है कि गृहस्थ आश्रम वह साधना स्थली है जहां रहने वाले दम्पति एवं परिवार के अन्य सदस्य कठोर परिश्रम करते हैं।

गृहस्थ जीवन ही परिवार का केंद्र है, अत: गृहस्थ-निर्माण का आधारभूत दाम्पत्य या पति-पत्नी का संयोग है। इस आदर्श दाम्पत्य की कामना वेद में इस भांति की गई है-

समञ्जन्तु विश्वे देवा समापो हृदयानि नौ।
सं मातरिश्वा समु धाता समु देष्ट्री दधातु नौ।।

ऋ. १०/८५/४७

अर्थात् सब विद्वान् और दिव्यशक्तियां मिलकर ऐसा करें कि हम दोनों (पति-पत्नी) के हृदय जलों की भांति एकरूप हो जाएं, वायु की भांति समान गुण-कर्म वाले हो जाएं, परमात्मा के द्वारा धारण की गई सृष्टि के समान एक-दूसरे को धारण करें और वक्ता और श्रोता की भांति परस्पर प्रीति रखें। एक आदर्श दम्पति को वेद माता आशीर्वाद देती है कि तुम इस गृहस्थाश्रम में आनंदपूर्वक पूर्ण आयु का भोग करें, तुम्हारा कभी वियोग न हो और पुत्र-पौत्रों के साथ अपने घर में खेलते हुए जीवन बिताओ-

इहैव स्तं मा वियौष्टं पूर्णमायुर्व्यश्नुतम्।
क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे दमे।।

ऋ. १०/८५/४२

दम्पत्ति की गृहस्थ-साधना का लक्ष्य सन्तति-निर्माण है। पत्नी को 'जाया' इसीलिए कहा जाता है कि उसमें संतानरूप में पति स्वयं जन्म लेता है-

अर्धो ह वा एष आत्मनो यज्जाया। तस्माद् यावज्जायां न विन्दते नैव तावत् प्रजायते। शतपथ ब्राह्मण, ५/२१/१०

संतान के लिए सुख-सुविधा, शिक्षा-दीक्षा के साधन जुटाना पति-पत्नी का कर्तव्य है। वेद में जहां एक ओर-'दशवीरा जयेम्' जैसे वाक्यों में दस वीर पुत्रों की कामना है, वहीं दूसरी ओर 'बहुप्रजा निर्ऋतिमाविवेश' भी कहा गया है, जिसका संदेश है कि अधिक संतान वाला गृहस्थ कष्टों में पड़ता है।

इस भांति पति-पत्नी और संतान को मिलाकर जिस परिवार का निर्माण होता है, उसमें सबका परस्पर कैसा व्यवहार हो, इसके लिए वेद का आदेश है-

अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिवाम्।।

अथर्व. ३/३०/२

अर्थात् परिवार में पुत्र पिता के अनुव्रत हो और सुखद वाणी बोले। 'अनुव्रत' का अभिप्राय है कि जैसा पिता का आचरण है वैसा ही पुत्र का हो- इसके लिए पहले पिता को अपना आचरण संयत करना होगा। माता के प्रति पुत्र के हृदय में सम्मान की भावना हो, किंतु पत्नी रूप में उस माता का कर्तव्य है कि वह पति के प्रति मधुर भाषिणी हो। साथ ही भाई-भाई से द्वेष न करे, बहिन बहिन से ईर्ष्या न करे और सब परिवारजन एक से विचारों वाले और एक प्रकार के कर्म करने वाले हों तथा परस्पर शिष्टतापूर्वक वार्तालाप करें-

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षत् मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।।

अथर्व. ३/३०/३

परस्पर प्रेम परिवार के सुख का आधार है और ऐसे प्रेममय वातावरण में परिवार सुख-शांति एवं समृद्धि से भरा रहेगा। ऐसे परिवार के लिए वेदमंत्र में प्रार्थना है कि-

सूनृतावन्तः सुभगा इरावन्तो हसामुदाः।
अतृष्या अक्षुध्या स्त मा गृहास्मद् बिभीतन।।

अथर्व. ७/६०/६

हे गृहस्थो! तुम लोग 'सुनृता' वाणी (सत्य, मधुर वाणी) बोलो, अच्छा, श्रेष्ठ धन कमाओ, भरपूर अन्न वाले बनो, हंसते-मुस्कुराते रहो, तृष्णा से रहित, संतुष्ट रहो तथा तृप्त रहो- ऐसी मर्यादाओं से युक्त तुम लोग हमसे, अर्थात् अतिथियों से मत डरो। स्पष्ट है कि जब परिवार इन सब मर्यादाओं का पालन करेंगे तो वहां अतिथियों का स्वागत-सत्कार भी होगा और फिर उनसे डरने की आवश्यकता ही न होगी। गृहस्थों के लिए जिन पञ्च महायज्ञों का विधान है, उनमें 'अतिथियज्ञ' अतीव महत्वपूर्ण है। अत: परिवार में

परस्पर सौहार्द-सद्भावना के साथ-साथ सामाजिक कर्तव्यों का पालन भी होना चाहिए- यही वेद का संदेश है।

आज व्यक्तिवादी, स्वार्थप्रधान पाश्चात्य संस्कृति के प्रचार से 'परिवार' संस्था का वह उदात्त, उत्कृष्ट रूप देखने को नहीं मिलता जिसमें सब परिवारीजन एक-दूसरे के प्रति सम्मान एवं साहचर्य का भाव रखते थे तथा अधिकारों की अपेक्षा अपने कर्त्तव्यों पर अधिक ध्यान देते थे। यही कारण है कि आज श्रेष्ठ मानवों का सर्वत्र अभाव दिखाई देता है क्योंकि परिवार ही मानव-निर्माण की कार्यशाला है। माता, पिता, विद्यार्थी, अध्यापक, उपदेशक, चिकित्सक, व्यापारी, नेता, अभिनेता- इन सबका व्यक्तित्व मूलतः परिवार में ही बनता है, अतः परिवार के सुधार की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करते हुए वेद उद्बोधन देता है कि-

ज्यायस्वन्तश्चित्तिनो मा वियौष्ट संराधयन्तः सधुराश्चरन्तः। अन्यो अन्यस्मै वल्गु वदन्त एत सध्रीचीनान्वः संमनसस्कृणोमि।।

अथर्व. ३/३१/१५

हे परिवारजनो! तुम लोग अपने बड़ों का मान करने वाले बनो, बुद्धिमान होकर परस्पर वृद्धि के लिए काम करो तथा एक-दूसरे के लिए सत्य और मधुर वचन बोलो, एक-दूसरे के मन को समझते हुए सहगामी और सहचारी बनो जैसे बैल आदि पशु एक जुए में जुड़कर चलते हैं और भार वहन करते हैं। जब इस भांति सब परिवारजन अपने दायित्व को समझते हुए, एक-दूसरे की भावनाओं का आदर करते हुए मिल कर चलते हैं तो 'सौमनस्य' की सृष्टि होती है और पृथ्वी पर ही स्वर्ग का सुख फैलता है-

सध्रीचीनान् वः संमनसस्कृणोम्येकश्नुष्टीन् संवननेन सर्वान्। देवा इवामृतं रक्षमाणाः सायं प्रातः सौमनसो वो अस्तु।। अथर्व. ३/३०/७

परिवार में 'सांमनस्य' होना अत्यंत आवश्यक है, जब तक सबके हृदय एक नहीं होंगे, तब तक विचार एक से नहीं होंगे और जब विचार एक से नहीं होंगे तो विरोध होना स्वाभाविक है। परस्पर विरोध होने पर सब एक-दूसरे का अनिष्ट सोचेंगे और क्षुद्र, स्वार्थप्रेरित व्यवहार करेंगे, इसलिए वैदिक विधान रखा गया है कि सब 'संसेवन' के आश्रय से 'एक-श्नुष्टि' बनें अर्थात् अनुशासित हों। किंतु सामान्य मानव-स्वभाव को देखते हुए यह विधान कुछ कठिन प्रतीत होता है, अतः पुनः प्रेरणा देते हुए कहा गया है-

येन देवा नो वियन्ति नो च विद्विषते मिथः।
तत्कृण्मो ब्रह्म वो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्यः।।

अथर्व. ३/३०/४

हे गृहस्थो! मैं तुम लोगों के लिए घर में वही कर्म निश्चित करता हूं जिसमें विद्वान लोग आचरण करते हैं और न तो परस्पर द्वेष रखते हैं और न ही पृथक होते हैं। तुम लोग भी उसी भांति परस्पर प्रीति से व्यवहार करो और ऐश्वर्य को प्राप्त करो। विद्वानों के अनुसार आचरण करने से परिवार में सुख-शांति होगी और परिवार शांत होने से हमाज में भी शान्ति का साम्राज्य होगा। किंतु इस कार्य के लिए परिवार के बुजुर्गों को पहल करनी चाहिए, उनका कर्त्तव्य है कि वे अपने पुत्र-पुत्रियों को ऐसी शिक्षा से सुसंस्कृत करें जो सदाचार को और सुमति को बढ़ाने वाली हो तथा उन्हें बुराईयों से बचाए-

अवन्तु नः पितरः सुप्रवाचाना उत देवी देवपुत्रे ऋतावृधा। रथं न दुरगाद् वसवः सुदानवो विश्वस्मान् नो अंहसो निष्पपर्तन।।

ऋ. १/१०६/३

अतः जो वृद्धजन 'सुप्रवाचना' (अच्छे, उत्तम वचन बोलने वाले) तथा 'सुदानवः' (अच्छे संस्कारों को देने वाले) हैं, उनके लिए उनके परिवारजनों का स्वाभाविक सम्मान होता है तथा वे उन्हें सदा आदरपूर्वक बुलाते हैं और कहते हैं कि-

आत्मानं पितरं पुत्रं पौत्रं पितामहम्।
जायां जनित्रीं मातरं ये प्रियास्तानुपह्वये।।

अथर्व. ९/५/३०

अपने पिता, पुत्र, पौत्र, दादा, पत्नी, उत्पन्न करने वाली जननी माता को और जो भी प्रिय है, उन सबको मैं आदर से बुलाता हूं। ऐसे परिवार में जहां बड़े छोटों का ध्यान रखें और छोटे बड़ों का मान करें, सबके प्रति स्नेह-भाव का विस्तार होना स्वाभाविक है तथा ऐसे स्नेहमय वातावरण में ही गृहस्वामी की यह अभिलाषा सार्थक होती है कि मेरे घर में मेरी माता सुख से सोये, पिता सुख से सोये, कुत्ता सुख से सोये, प्रजापति सुख से सोये, सब संबंधी सुखपूर्वक सोयें और आसपास सब लोग सुख से सोयें-

सस्तु माता सस्तु पिता सस्तु श्वा सस्तु विश्पतिः।
ससन्तु सर्वे ज्ञातयः सस्त्वयमभितोजनः।।

ऋ. ७/५५/५

इस भांति सबकी हित-भावना से प्रेरित तथा परिवार के वृद्धजनों के आशीर्वाद से अभिषिक्त गृहस्थ पवित्र आचरण वाले होते हैं तथा आनंदपूर्वक पूर्ण आयु भोगते हैं, उनके पितर, पितामह और प्रपितामह शांत एवं संतुष्ट होकर उन्हें पवित्र करते हैं-

पुनन्तु मा पितरः सोम्यासः पुनन्तु मा पितामहाः।
पुनन्तु प्रपितामहाः पवित्रेण शतायुषा।
...विश्वमायुर्व्यश्नवै।। यजु. १९/३७

इस भांति, वैदिक परिकल्पना में आदर्श परिवार वही है जहां सभी परिवाजन अपने लौकिक, व्यावहारिक कर्त्तव्यों एवं संबंधों का सुचारुरूपेण पालन करते हैं तथा एक-दूसरे के प्रति स्वाभाविक स्नेह-सूत्र में आबद्ध रहते हैं। ○○

“ईश्वर सच्चिदानन्द-स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है। *- महर्षि दयानन्द सरस्वती*”

The Arya Samaj Act-an Inevitable Necessity

Lt. Col. Vinaya Kumar (Retd.)

I Came across Mr Atul Sehgal on social net working platform when I read his article 'A Rationalist View of God' (Speaking Tree TOI June, 2012). I wrote another article as a sequel to his said article, titled as 'Rationalization of the Arya Samaj'. On this he sent me a four page article on the Arya Samaj, Institution, a draft chapter no. 15 of his forthcoming book. Again I revised his said draft chapter and introduced the need of "The Arya Samaj Act'.

The Arya Samaj Act-An Inevitable Necessity. During the last 40or50 years, the growth of the Arya Samaj has stagnated in the existing establishments; the membership is conspicuous by the absence of young blood. The zeal and the drive to recruit new members in Southern, Eastern and Western states of the country is not visible. Even in the existing establishments the single minded dedication and commitment to the institution's mission is not in evidence. In recent years, the attitude of many members of the Arya Samaj towards irrational and superstitious practices like idolatry has become indifferent because of social necessity. Superstitions and irrational rituals can only be banished if you have a rigid attitude against them, not if you are indifferent towards them. This objective can only be achieved under a strong sole leadership of the institution of the Arya Samaj, which is missing under the present context. The mismanagement of the Arya Samaj is retarding the tempo, if not defeating the purpose of the work that the Arya Samaj is meant to perform.

It is unfortunate that even at the present time ninety percent of Hindus practice idol worship; follow the hierarchical caste system based on birth; believe in astrology and perform all those rituals which Swami Dayanand had strongly denounced. Here is a point for thorough analysis! The Arya Samaj has great responsibility on its shoulders. The institution needs service of an army of young men and women as activists to continue the fight against the aforesaid evils of the Hindu society in particular and the remaining humankind as a whole.

Arya Samaj is neither a communal nor a sectarian organization. It is an institution consisting of noble, rational minded people who strongly believe in the concept of global family and universal brotherhood. There is a great need to strengthen this institution, and it can only be ensured by positioning the institution of the Arya Samaj under a sole legal leadership. Let us learn from the precedents. In 1925 The Sikh Gurdwaras were being mismanaged and were declared the private property of the Mahants (Religious Teacher), which led to the unrest within the Sikh Community. The central government conceived an idea to sort out the problem. The Govt.

Conveyed to the Sikhs through their scholars and sardars that they should stop their movement and accept this peaceful offer to the Govt. would themselves liberate the Gurdwaras from the Mahants and hand them over to SGPC and hold the periodical elections of its president and office bearers. It is how SGPC was formed and thus they got legal central leadership. The precedent was again demanded by the Sikh Community and thus Delhi Gurdwaras Management Committee (DGPC) 1974 came into effect. As explained above, the institution of the Arya Samaj as a whole is administratively in great shambles. This does not refer to a particular Arya Samaj. It is about the institution of the Arya Samaj as a whole! This is the time when we must approach the state to intervene as it has become inevitable to bring the situation under control. OO

ईश्वर को पाने का सहज मार्ग प्रार्थना और ध्यान

ब्रह्मा कुमार कोमल

ईश्वर तथा आध्यात्मिक शक्तियों को प्राप्त करने की दो विधियां हैं- प्रार्थना और ध्यान। भक्ति मार्ग में प्रार्थना और ध्यान दोनों का महत्व है। ऐसा माना जाता है कि प्रार्थना से ध्यान थोड़ा कठिन है, क्योंकि प्रार्थना सहज है और इसे प्रत्येक व्यक्ति आसानी से कर सकता है। लेकिन ध्यान के लिए मानसिक एकाग्रता की आवश्यकता पड़ती ही है।

प्रार्थना का महत्व कहते हैं कि जब हम कमजोर अथवा असहाय हो जाते हैं, तब प्रार्थना के अलावा और कोई रास्ता हमें दिखाई ही नहीं पड़ता है। प्रार्थना उच्च, मध्यम, यहां तक कि निम्न कोटि की भी हो सकती है। कभी-कभी हम स्वार्थ और दिखाने के लिए भी देवी-देवताओं के समक्ष आंखें बंद कर प्रार्थना करते हैं। कुछ लोग तो केवल अपने क्षुद्र स्वार्थ की प्राप्ति के लिए भी प्रार्थना करते हैं। जब हम सच्चे मन से दूसरों की भलाई के लिए ईश्वर से प्रार्थना करते हैं, तो उसे उच्च कोटि की प्रार्थना माना जाता है। इसके अलावा, जब हम अपने लिए आध्यात्मिक शक्ति से परिपूर्ण होने के लिए प्रार्थना करते हैं, तो वह मध्यम हो जाती है और जब हम दूसरों को नीचा दिखाने के लिए प्रार्थना करते हैं, तो वह निम्न स्तर की प्रार्थना हो जाती है।

प्रार्थना में हमें न केवल ईश्वर से मांगना पड़ता है, बल्कि याचना भी करनी पड़ती है, जबकि ध्यान में अपने आप ही सब कुछ मिल जाता है। प्रार्थना में आध्यात्मिक ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती है, क्योंकि हम प्रार्थना बचपन में ही सीख जाते हैं। जीवन से मुक्ति दिलाता है ध्यान वास्तव में, जीवन से मुक्ति प्राप्त करने आध्यात्मिक शक्ति-संपन्न बनने, इंद्रियों पर विजय प्राप्त करने, ईश्वर को प्रसन्न करने तथा पूरे संसार पर विजय पाने का एकमात्र साधन है ध्यान। ध्यान की विधियां सहज और सरल जरूर हैं, लेकिन उसके लिए आध्यात्मिक ज्ञान का होना आवश्यक है। ध्यान के लिए ईश्वरीय मर्यादाओं के पालन की आवश्यकता भी पड़ती है। ध्यान में मौन भाषा अनिवार्य है। सच तो यह है कि आज तक जितने भी महापुरुष और सिद्ध पुरुष हुए हैं, उनकी सफलता ध्यान से ही संभव हो पाई है।

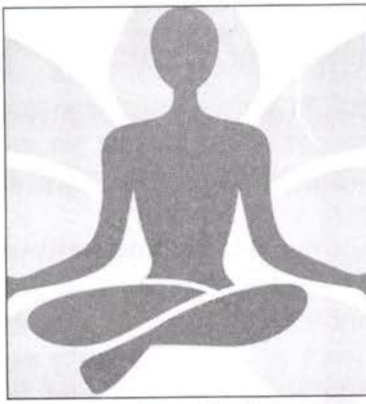

ध्यान से न केवल विचारों में पवित्रता आती है, बल्कि हमारी संकल्प शक्ति में भी वृद्धि होती है। पारिवारिक और सामाजिक रिश्तों में भी ध्यान की अहम भूमिका होती है। जब हम ध्यान करते हैं, तो उससे निकलने वाली ऊर्जा और शक्ति शुद्ध और शक्तिशाली वातावरण का निर्माण करती है

ध्यान से न केवल विचारों में पवित्रता आती है, बल्कि हमारी संकल्प शक्ति में भी वृद्धि होती है। पारिवारिक और सामाजिक रिश्तों में भी ध्यान की अहम भूमिका होती है। जब हम ध्यान करते हैं, तो उससे निकलने वाली ऊर्जा और शक्ति शुद्ध और शक्तिशाली वातावरण का निर्माण करती है। श्रीमद्‌भागवत गीता में भी श्रीकृष्ण ने परमात्मा की प्राप्ति का साधन ध्यान को ही बताया है। ध्यान से हम सभी सांसारिक माया-मोह के बंधनों से मुक्त हो मोक्ष प्राप्ति की ओर अग्रसर होने लगते हैं। श्रीकृष्ण ने गीता में भी कहा है, हे अर्जुन परमात्मा को पाने के लिए कर्मकांड नहीं, बल्कि ध्यान ही श्रेष्ठ विधि है। अपने मन के तार को परमात्मा के साथ जोड़ना ही ध्यान और योग कहलाता है। ध्यान या प्रार्थना अब सवाल यह उठता है कि ध्यान किया जाए या प्रार्थना! सच तो यह है कि ध्यान सर्वश्रेष्ठ है। इसलिए यदि किसी भी व्यक्ति को परमात्मा की मदद, स्वयं पर नियंत्रण, पारिवारिक सामंजस्य स्थापित करने या दूसरे व्यक्तियों के मनोभावों को जानना है, तो ध्यान ही है सर्वश्रेष्ठ साधन।

ध्यान में हमारे स्थूल नेत्र बंद हो जाते हैं और अंत:करण का नेत्र खुल जाता है। इस नेत्र से एक स्थान पर बैठा व्यक्ति दूर की वस्तुओं को देख सकता है, दूसरे व्यक्ति को संदेश दे सकता है। दरअसल, ध्यान की सहायता से हम असंभव से लगने वाले कार्य को भी संभव बना सकते हैं। इसलिए ध्यान और योग की प्रक्रिया को प्राचीन काल से ही विभिन्न महापुरुषों, देवताओं, महाऋषियों ने प्रतिपादित किया है। योगों में सबसे उच्च योग की प्रक्रिया स्वयं सर्वआत्माओं के परमपिता परमात्मा शिव ने योगेश्वर के रूप में हमें बताया और सिखाया है। आइए, हम ध्यान की सहायता से आध्यात्मिक शक्तियों से अपने जीवन को श्रेष्ठ बनाएं। यही समय की मांग है।

OO

सत्संग : बिनु सत्संग विवेक न होई

डॉ. मनोहरलाल आर्य 'मक्कड़'

कर्तव्य का निर्णय सत्संग के द्वारा ही सम्भव है और किसी प्रकार नहीं। यह सत्संग चार भागों में विभाजित है-

1. निज विवेक के प्रकाश में अपने जाने हुए असत् का त्याग सत् में प्रतिष्ठित होना ही सर्वोत्कृष्ट सत्संग है। यह नियम है कि असत् का त्याग करते ही सत् का संग स्वत: हो जाता है। असत् को असत् जान लेने पर असत् के त्याग का बल आ जाता है।

2. सत्पुरुषों के प्रकाश में बैठकर अपने असत् को असत् जानकर उसका त्याग कर सत् का संग प्राप्त करना चाहिए। यदि कोई यह कहे कि सत्पुरुष कौन है? तो कहना होगा कि जिसमें अपनी बुद्धि से किसी दोष का दर्शन न हो और अपने लिए स्वाभाविक श्रद्धा जागृत हो, वही सत्पुरुष है।

3. सद्ग्रंथों के प्रकाश में अपने असत् को देखना और उसका त्याग करना भी सत्संग है।

4. परस्पर में स्नेह तथा सद्भावना के साथ विचार विनिमय द्वारा अपने असत् को जानना और उसका त्याग कर सत् में परायण होना भी सत्संग है। कर्तव्य निर्णय होने पर अपने कर्तव्य के प्रति नि:संदेहता, विश्वास तथा प्रियता स्वत: उत्पन्न होती है। कर्तव्य के तीन भाग हैं-

समाज के अधिकार की रक्षा : समाज के अधिकार की रक्षा करने से तो साधक समाज के ऋण से मुक्त होता है और सुंदर समाज का निर्माण होता है।

तत्व-जिज्ञासा की पूर्ति : तत्व-जिज्ञासा की पूर्ति से भोग इच्छाओं की निवृत्ति भी होती है और अमरत्व की प्राप्ति भी हो जाती है अथवा वास्तविक स्वाधीनता प्राप्त होती है, जो मानवमात्र को प्रिय है।

परम प्रेम की प्राप्ति : परम प्रेम की प्राप्ति में नित नवरस तथा दिव्य चिन्मय आनंद से अभिन्नता हो जाती है, जो सभी को अभीष्ट है। यह सभी को मान्य होगा, कि भोग से शक्ति का ह्रास तथा जड़ता एवं परतंत्रता प्राप्त होती है जो किसी को अभीष्ट नहीं है।

योग से शक्ति, संयम, स्वाधीनता तथा चेतना प्राप्त होती है, जो सभी को अभीष्ट है। योग से आवश्यक शक्ति का विकास होता है, जो कर्तव्यपालन तथा लक्ष्य की प्राप्ति कराने में समर्थ है। इतना ही नहीं, योग प्राणी को अस्वाभाविकता से स्वाभाविकता की ओर ले जाता है, अर्थात् असत्य से सत्य की ओर, मृत्यु से अमरत्व की ओर और अंधकार से प्रकाश की ओर गतिशील करता है। जिससे प्राणी इच्छाओं की निवृत्ति तथा आवश्यकता की पूर्ति करने में समर्थ हो जाता है। जो मानव जीवन का लक्ष्य है, और यही सत्संग का अभिप्राय है। इसी प्रकार योग की क्रिया भी प्रभु से संगतिकरण ही है।

सत्संग पर कुछ कवियों के वचन : एक फारसी का कवि कहता है-

सोहबते सालह तुरा सालह कुनद।
सोहबते तालह तुरा तालह कुनद॥

अर्थात् भले पुरुषों की संगति से तू अच्छा (भला) बनेगा और बुरे पुरुषों की संगति, तुझे मानवता से दूर रखेगी।

कदली, सीप, भुजंग मुख स्वाती एक गुण तीन। जैसी संगति बैठिये तैसो ही फल दीन॥

अर्थात् स्वाती नक्षत्र में बरसते पानी की बूंद जब केले के पत्ते पर पड़ती है तो कपूर बन जाती है। सीप के मुख में पड़ कर मोती बनती है। और सांप के मुख में पड़कर विष बन जाती है। अर्थात् बूंद जैसी संगति करती है, उसी के स्वभाव वाली बन जाती है।

बहे सत्संग की गंगा :

बहे सत्संग की गंगा, चलो चल कर नहा आयें।
घड़ी आधी घड़ी, जीवन की चिताएं मिटा आयें॥
यह सिक्के सोने चांदी के इसी दुनिया में चलते हैं।
चले परलोक में जाकर जो ऐसा धन कमा आयें॥
विषय भोगों की आंधी ने, बुझा दी रोशनी मन की।
उसी ज्योति को फिर सत्संग में चलकर जला आयें॥
पड़ी मंझधार में नैया, किनारा दूर है अभी तो।
प्रभु के नाम का चप्पू लगाकर, पार उतर जायें॥
एक घड़ी आधी घड़ी आधी से पुन आध।
तुलसी संगत साधु की हरिहं कोटि अपराध॥
करत-करत अभ्यास ते जड़मति हो सुजान।
रसरी आवत जात से सिल पर पड़त निसान॥

सत्संग में जाने का एक बड़ा भारी लाभ यह है कि जितना समय हम सत्संग में बैठते हैं। उतना समय हम बुरी वासनाओं से बचे रहते हैं। खासकर प्रात:काल में मनुष्य बिस्तर पर पड़े-पड़े कुछ गलत ढंग से सोचता है।

सत्संग के बारे में एक सुंदर वेद-मंत्र : सत्संग योग्य देव।

ओउम स्वस्ति पंथामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददता घ्नता जानता सं गमेमहि॥

अर्थ : (सूर्याचन्द्रमसौ इव) सूर्य और चन्द्रमा की तरह (स्वस्ति पन्थाम्) कल्याण के मार्ग के (अनुचरेम) अनुगामी हों और (पुन:) फिर (ददता) दान देने वाले-वैश्यों (अघ्नता) अहिंसक=क्षत्रियों और (जानता) ज्ञानी=ब्रह्मणों विद्वानों का (सं गमेमहि) संग करें।

भावार्थ : हे प्रभो हम सदा सूर्य और चन्द्रमा की भांति अपने जीवन में कल्याणकारी मार्गों पर निर्बाध गति और उपकारक भाव से चलते रहें और अनुसरण करें। उत्तम दान, शिक्षा सहयोग देने वालों के साथ, अहिंसक अर्थात् पीड़ा न देने वालोंल हानि बाधा न पहुंचाने वालों, वैर ईर्ष्या न रखने वालों के साथ और ज्ञानी जनों के साथ सदा और बार-बार संगति करें। OO

श्री स्वामी दीक्षानन्द सरस्वती

ब्रह्मचर्य व्रत लेकर उनने किया अध्ययन भारी।
जिससे उनको मिला विलक्षण ज्ञान सर्वहितकारी।
स्नातक होकर गुरुकुल में उन्होंने प्रथम पढ़ाया।
प्रिय शिष्यों को पाठन विधि से उन्नति शिखर चढ़ाया।।

बन करके आचार्य कृष्ण रहे सदा अविद्याध्वंसक।
बड़े-बड़े दिग्गज पंडित भी उनके बने प्रशंक।
मृदुभाषी मितभाषी उन्होंने अनुपम यश पाया था।
यज्ञविषय में उनके श्रम को सबने शिर नवाया था।।

हुआ जभी आह्वा छोड़ शिक्षण हो गये उपदेशक।
'स्वाध्याय सर्वस्व' आदि रच ग्रंथ हो गये लेखक।
शिक्षक उपदेशक लेखक वे ईश्वर आराधक थे।
अपनी संस्कृति और सभ्यता के दृढ़तम साधक थे।।

उनका क्षेत्र बहुत विस्तृत था महापुरुष थे स्वामी।
था उनका व्यक्तित्व सभी विधि निश्चय बहुआयामी।
किया उन्होंने वेद धर्म हित निज जीवन का अर्पण।
कर गये ऋषिवर दयानन्द का वे प्राणों से तर्पण।।

भौतिक तन को त्याग मुक्ति पथ के होकर अनुगामी।
संस्मरणीय बन ये सबके दीक्षानन्द जी स्वामी।
उनको श्रद्धांजलि देने हित अगणित आर्य पधारे।
क्योंकि सभी को रहे अनवरत वे प्राणों सम प्यारे।।

➲ संकलन : आर्यसमाज, नोएडा

ओस की बूंद सी होती हैं बेटियां

ओस की एक बूंद सी होती हैं बेटियां
स्पर्श खुरदरा हो तो रोती हैं बेटियां।

रौशन करेगा बेटा तो एक कुल को
दो-दो कुलों की लाज को ढोती हैं बेटियां।

कोई नहीं दोस्तों एक दूसरे के कम
हीरा अगर है बेटा तो मोती हैं बेटियां।

कांटों की राह पर खुद चलती रहेंगी
औरों की राह में फूल बोती हैं बेटियां।

विधि का विधान है यही दुनिया की रस्म
मुट्ठी में भरे नीर सी होती हैं बेटियां।।

➲ सुदेश मेहता

कविता... ➲ साध्वी भाटिया

क्यूं हो तेरा हर सुख-दुख निर्भर,
दुनिया की मोह माया में।
क्यूं हर एक कदम तू ले,
दूर ईश्वर की छाया से।
स्वर्ग नरक सब है यही प्यारे,
यूं तो तुम्हारे कर्मों से।
भगवान को भी तू ढूंढ़े कहां
मिले तो बस मात-पिता के चरणों में।।

रिश्ता विश्वास का

एक रिश्ता ऐसा, जो है हर रिश्ते की बुनियाद
निभानी हो किसी मित्र संग प्रीत
या करनी हो प्रभु से फरियाद।।

चूको न निभाने से इसे कभी
स्मरण इसके संग हर इक श्वास
डगमगाये न, हो चाहे तूफान कितने
कुछ ऐसा रखो ईश्वर पर अपने विश्वास।।

युग प्रवर्तक महर्षि दयानंद सरस्वती

आर्य बी.एस शर्मा
कौशाम्बी, गाजियाबाद

युग प्रवर्तक महर्षि दयानंद सरस्वती जी को यह मंत्र सर्वाधिक प्रिय लगता था तभी तो किसी भी कार्य, कर्म, आयोजन अथवा प्रवचन का श्रीगणेश करने से पूर्व इस मंत्र का ही उद्घोष करते थे– ओ३म! विश्वानि देव सवितरदुरितानि परा सुव। यद भद्रं तन्न आ सुव।। यजु. ३०/३।।

यजुर्वेद में कुल 1975 मंत्रों का संग्रह है। इन सभी में अध्यात्म के गूढ़ रहस्य छिपे हुए हैं। यजुर्वेद के 30वें अध्याय का यह तीसरा मंत्र है। प्रदान कीजिए अथवा उपलब्ध कराइये।

पदार्थ, हे (देव) उत्तम गुणकर्म स्वभाव युक्त (सवितः) उत्तम गुणकर्म स्वभावों में प्रेरणा देने वाले परमेश्वर। आप हमारे (विश्वानि) सब (दुरितानि) बुरे आचरण अथवा दुखों को (परा सुव) दूर कीजिए और (यत्) जो (भद्रं) कल्याणकारी धर्म युक्त आचरण अथवा सुख है (तत्) उसको (नः) हमारे लिए (आ, सुव)। विस्तृत व्याख्या इस मंत्र की उत्कृष्टता एवं गूढ़ अर्थ विशेषता को ध्यान में रखते हुए इसे ईश्वर स्तुतिपरारथनोपासना मंत्रों में प्रथम स्थान पर रखा गया है।

परमेश्वर की स्तुति पद्य, तू सर्वेश सकल सुख दाता, शुद्ध स्वरूप विधाता है, उसके कष्ट नष्ट हो जाते, जो समीप तेरे आता है। सभी दुर्गुणों दुर्व्यसनों से, हमको नाथ बचा लीजे, मंगलमय गुण कर्म पदार्थ, प्रेम सिंधु हमको दीजे। गद्य ओ३म हे सकल जगत के उत्पत्तिकर्ता, समग्र ऐश्वर्य एवं सुख के दाता, सर्व शक्तिमान सविता देव, आप कृपा करके हमारे संपूर्ण दुर्गुणों, दुर्व्यसनों एवं दुखों को दूर कर दीजिए तथा जो कुछ अच्छा और कल्याण कारक है वह हमे प्राप्त कराइये।

हे सर्व व्यापक और सर्वांतर्यामी प्रभो आप प्राणी मात्र के हृदय मंदिर में रहते हैं। सभी की मन की भावनाओं को जानते हैं। हमें ऐसी मानसिक शक्ति प्रदान करने की कृपा करें कि हमारे संकल्प सदा पवित्र रहे। हमारी वाणी सदा शुद्ध और पवित्र रहे। करते समय हमारा मन पवित्र और वाणी शुद्ध एवं पवित्र होनी चाहिए। हम प्रार्थना करे कि हे परमेश्वर आइये मेरे अंतःकरण में विराजिए।

हे भगवन् तू ही मेरा सच्चा और वास्तविक मित्र है। हे दयानिधे, तेरी कृपा महान है। आप नित्य प्रति हमें अपने पावन सोमरस का पान करा कर हमारा उत्थान और कल्याण चाहते रहते हैं। आपकी इस अपार दया के लिए आपका बार-बार धन्यवाद करते हुए आपको बार-बार प्रेम भरा नमस्कार करते हैं। हम इस संसार में सबसे प्रेम पूर्वक आचरण करे।

किसी को भी पराया न समझे। मेरा हृदय पवित्र तभी रह सकता है जबकि मेरे हृदय मे किसी प्रकार का कोई दुर्गुण न रहे मेरे अन्दर किसी भी प्रकार का कोई दुर्व्यसन न हो तथा किसी भी प्रकार की कोई बुराई न हो। मेरे प्रभु इन बुराइयों को मेरे अंतःकरण से पूर्णतया दूर कीजिए। मेरी भावनाएं श्रेष्ठता की सुगंध को प्रसारित करने वाली होवे और सदा तेरे चरण कमलों में ही मेरा मन तल्लीन रहे। सर्वे भवन्तु सुखिन सर्वे संतु निरामया की भावना से मेरा मन ओत-प्रोत रहे।

अतः हे करुणा स्वरूप परमेश्वर, हे दयालु देव, तेरे चरण कमलों की शीतल छाया में तेरे गुणगान करते हुए मैं आनंद विभोर होकर अपने आप को भूल जाऊं।

सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य का विचार करके करने चाहिए।

संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतंत्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतंत्र रहें।

- महर्षि दयानन्द सरस्वती

हवन का महत्व

रविन्द्र सेठ
प्रधान, आर्य समाज, नोएडा

फ्रांस के ट्रेले नामक वैज्ञानिक ने हवन पर रिसर्च की, जिसमें उन्हें पता चला की हवन मुख्यतः आम की लकड़ी से किया जाता है। जब आम की लकड़ी जलती है तो फॉर्मिक एल्डिहाइड नामक गैस उत्पन्न होती है। जो कि खतरनाक बैक्टीरिया और जीवाणुओं को मारती है तथा वातावरण को शुद्ध करती है। इस रिसर्च के बाद ही वैज्ञानिकों को इस गैस और इसे बनाने का तरीका पता चला।

गुड़ को जलाने पर भी ये गैस उत्पन्न होती है। टौटीक नामक वैज्ञानिक ने हवन पर की गयी अपनी रिसर्च में यह पाया की यदि आधे घंटे हवन में बैठा जाये अथवा हवन के धुएं से शरीर का सम्पर्क हो तो टाइफाइड जैसे खतरनाक रोग फैलाने वाले जीवाणु भी मर जाते हैं और शरीर शुद्ध हो जाता है।

हवन की महत्ता देखते हुए राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान लखनऊ के वैज्ञानिकों ने भी इस पर एक रिसर्च किया। क्या वाकई हवन से वातावरण शुद्ध होता है और जीवाणु का नाश होता है? अथवा नही? उन्होंने ग्रंथों में वर्णित हवन सामग्री जुटाई और जलाने पर पाया कि ये विषाणु नाश करती है। फिर उन्होंने विभिन्न प्रकार के धुएं पर भी काम किया और देखा कि सिर्फ आम की लकड़ी 1 किलो जलाने से हवा में मौजूद विषाणु बहुत कम नहीं हुए। पर जैसे ही उसके ऊपर आधा किलो हवन सामग्री डालकर जलायी गयी तो एक घंटे के भीतर ही कक्ष में मौजूद बैक्टीरिया का स्तर 94 प्रतिशत कम हो गया। यही नहीं उन्होंने आगे भी कक्ष की हवा में मौजूद जीवाणुओं का परीक्षण किया और पाया कि कक्ष के दरवाजे खोले जाने और सारा धुआं निकल जाने के 24 घंटे बाद भी जीवाणुओं का स्तर सामान्य से 96 प्रतिशत कम था। बार-बार परीक्षण करने पर ज्ञात हुआ कि इस एक बार के धुएं का असर एक माह तक रहा और उस कक्ष की वायु में विषाणु स्तर 30 दिन बाद भी सामान्य से बहुत कम था।

यह रिपोर्ट एथ्नोफार्माकोलोजी के शोध पत्र (Resarch Journal of Ethnopharmacology 2007) में भी दिसम्बर 2007 में छप चुकी है। रिपोर्ट में लिखा गया कि हवन के द्वारा न सिर्फ मनुष्य बल्कि वनस्पतियों एवं फसलों को नुकसान पहुंचाने वाले बैक्टीरिया का भी नाश होता है। जिससे फसलों में रासायनिक खाद का प्रयोग कम हो सकता है। ○○

तरुवर फल नहीं खात...

नदियां अपना जल स्वयं नहीं पीतीं, वृक्ष अपने फल खुद नहीं खाते, वर्षा अपने द्वारा सींचे गए अन्न को नहीं खाती और अच्छे व्यक्ति की संपत्ति दूसरों के फायदे के लिए होती है। कहने का अभिप्राय यह कि प्रकृति के सभी तत्व परहित के लिए समर्पित हैं। इनका निजी स्वार्थ कुछ नहीं।

देने वाला यानी परोपकारी व्यक्ति बैंक के खजांची या शरीर में दिल के समान होता है। खजांची सारा धन ग्राहक या कर्मचारियों के वेतन आदि में खर्च कर देता है। वह उस धन में से निजी पूर्ति के लिए कुछ नहीं ले सकता। परोपकार के लिए सही समय है आज और अभी। महाभारत में युधिष्ठिर ने भिखारी से भीख मांगने पर, उसे अगले दिन आने को कहा। इस पर भीम ने टिप्पणी की और कहा कि मेरे भाई ने तो मृत्यु को मात दे दिया, क्योंकि वे जानते हैं कि कल वे उस भिखारी को भीख देने के लिए जीवित रहेंगे। युधिष्ठिर को शीघ्र ही संदेश मिला कि किसी को क्या पता कि आज वह है और कल जीवित नहीं भी रह सकता है।

परोपकार करने की कोई सीमा नहीं होती है। मुगलों से युद्ध में परास्त होकर राणा प्रताप ने अपनी सेना, धन-दौलत आदि, लड़ने का हौसला, सभी कुछ खो दिया था। उसी समय उनका भूतपूर्व मंत्री भामा आया और उन्होंने अपनी सारी संपत्ति उसको सौंप दी। इ संपत्ति के बलबूते राणा ने एक नई सेना तैयार की और अगला युद्ध लड़ने के लिए तैयार हो गए। देने के लिए धन बड़ी वस्तु नहीं, अपितु अभिवादन, फूल और मुस्कुराहट भी दी जा सकता है। यह जरूरी नहीं कि कौन है, महत्व तो इस बात का है कि वह किस भावना से देता है। परोपकार से न तो पाप के भागी को अपमानित महसूस करना चाहिए और न ही देने वाले को अभिमान। सबसे बड़ा वह होता है, जिसका प्रार शहनाइयों की मंगल ध्वनि से न होकर गुप्त हो।

➲ **डॉ. के.के. अग्रवाल**

समाचार - सूचनाएं

- **26 मार्च से 1 अप्रैल :** गुरुकुल मंझावली (हरियाणा) का 24वां वार्षिकोत्सव एवं यजुर्वेद पारायण यज्ञ व योग साधना शिविर स्वामी अग्निवेश जी, स्वामी प्रणवानन्द जी, रुद्रसेन जी, ठाकुर विक्रम सिंह जी, कै. अभिमन्यु, सांसद कुमारी शैलजा एवं अनेक संस्थाओं के अधिकारियों की उपस्थिति में सम्पन्न हुआ।

- **4 अप्रैल :** कन्या गुरुकुल लौवां कला (हरियाणा) का वार्षिक समारोह सफलतापूर्वक सम्पन्न।

- **21 अप्रैल :** महात्मा हंसराज जी के जन्मदिवस के उपलक्ष में 'समर्पण दिवस' पंचकूला में डीएवी मैनेजमेंट द्वारा मनाया गया।

आगामी कार्यक्रम :

- **5 मई शिक्षक दिवस :** पूर्व राष्ट्रपति सर्वपल्ली डा. राधकृष्णन जन्म दिवस शिक्षक दिवस के रूप में मनाया गया।

- **5-6 मई :** को दयानन्द चम्बा (हिमाचल) में विशाल आर्य महासम्मेलन, स्व. स्वामी सुमेधानन्द जी सरस्वती के जन्मदिन के उपलक्ष में आयोजित किया जा रहा है।

- **6 मई :** आर्य समाज, आर्ष गुरुकुल शिक्षा प्रबंध समिति (पं) का वार्षिक साधारण अधिवेशन आयोजित किया जा रहा है।

- **6,7,8 जुलाई 2018 :** सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में अंतर्राष्ट्रीय गुरुकुल महासम्मेलन का आयोजन 6,7,8 जुलाई 2018 को हरिद्वार में किया जा रहा है। सभी आर्यजनों व गुरुकुलों से सम्मेलन में भाग लेने हेतु अनुरोध किया गया है।

- **खबरों का सफर :** गांधी स्मृति प्रतिष्ठान, दिल्ली में नेशन केयर के तत्वावधान में भव्य कार्यक्रम में उत्कृष्ट सामाजिक सेवाओं के लिए महामंत्री आर्य कै. अशोक गुलाटी को Man of the year सम्मान से सम्मानित किया गया, हमारे लिए गर्व की बात है। तदर्थ बधाई एवं शुभकामनाएं। -व्यवस्थापक!

भूल सुधार

फरवरी 2018 के अंक में गलती से पृष्ठ सं. 14 पर पं. चमूपति एम.ए. के बारे में लिखा गया है कि उन्होंने वेदभाष्य किया व वेद की रचना की। यह त्रुटि पूर्ण होने से हम क्षमा प्रार्थी हैं। उन द्वारा वेदमंत्रों की व्याख्या की गई थी।

■ प्रबंध संपादक

सूचना : जनवरी मास से अधिकतर माननीय सदस्यों का वार्षिक शुल्क समाप्त हो गया है उनसे अंतिम बार सविनय अनुरोध है कि अपना वार्षिक शुल्क 250/-रुपया आर्य समाज, बी-69 सेक्टर-33, नोएडा (उप्र), को भिजवाने की कृपा करें ताकि उनकी पत्रिका 'विश्ववारा संस्कृति' निरंतर प्रेषित की जाती रहे।

■ प्रबंध संपादक : 9871798221

विश्ववारा संस्कृति

- सभी धार्मिक सामाजिक पत्रों की अपेक्षा अधिक संख्या में प्रकाशित होने वाली पत्रिका।
- वर्ष में 12 अंक प्राप्त करें।
- 'विश्ववारा संस्कृति' का वार्षिक सदस्यता शुल्क 250 रुपया है। और आजीवन सदस्यता शुल्क 2500 रुपया है।
- 'विश्ववारा संस्कृति' का विदेश में वार्षिक सदस्यता शुल्क 3100 रुपया है।
- लेखक अपने विचार, लेख, कविता आदि प्रकाशन सामग्री प्रत्येक मास की 2-4 तारीख तक भेज दिया करें।
- जिस मास से शुल्क भेजेंगे तभी से सदस्यता प्रारम्भ होगी।
- नमूना कॉपी के लिए रु. 20 का धन-आदेश द्वारा अग्रिम भेजें।
- प्रत्येक पत्र व्यवहार में अपनी सदस्यता संख्या अवश्य लिखें और उत्तर चाहने वाले व्यक्ति दोहरा कार्ड या टिकट भेजें।
- प्रत्येक पत्र-व्यवहार में अपना पता भी हिन्दी में साफ-साफ लिखा करें।
- आपके सुझाव अपेक्षित हैं।

■ प्रबंध संपादक

'विश्ववारा संस्कृति' : सदस्यता आवेदन पत्र

नाम : ....

आयु : .... दिनांक : ....

पता : ....

....

शहर : .... राज्य : .... पिन कोड : ....

फोन : .... मोबाइल : .... ई-मेल ....

नगद/चैक/मनी आर्डर/डीडी संख्या : ....

संरक्षक/आजीवन/पंच वर्षीय/वार्षिक सदस्यता हेतु संलग्न है।

चैक-मनी आर्डर 'आर्य समाज' नोएडा के नाम भिजवाएं अथवा आप लोग सीधे ही 'युनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया' नोएडा, सेक्टर-33 में खाता संख्या : 1483010100282, IFSC-UTB10SCN560 में जमा कराकर रसीद की प्रतिलिपि निम्न पते पर भेजें-

प्रबंध संपादक

'विश्ववारा संस्कृति'

आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा, (उप्र)

संपर्क सूत्र : 0120-2505731, 9871798221, 9555779591

ई-मेल : info.aryasamajnoida33@gmail.com

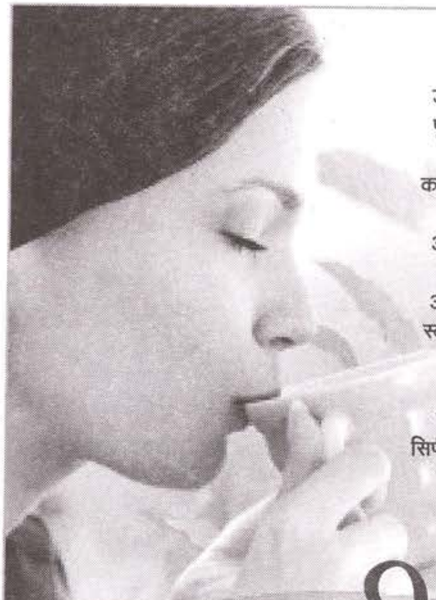

भारत में घर-घर तुलसी लगाई जाती है कारण सिर्फ एक है कि तुलसी पूजनीय है। पर क्या आप जानते हैं कि तुलसी में कितनी बीमारियों को भगाने का सामर्थ है। एक तुलसी कई बीमारियों पर भारी पड़ती है। वैसे तुलसी लगाने और उसकी पूजा करने के पीछे भी कुछ वैज्ञानिक कारण भी हैं। इसे लगाने से आसपास का माहौल भी साफ-सुथरा व स्वास्थ्यप्रद रहता है। तुलसी के स्वास्थ्य प्रदान करने वाले गुणों के कारण ही इसकी लोकप्रियता इतनी बढ़ गई कि इसका पूजन किया जाने लगा। तुलसी सिर्फ बीमारियों पर ही नहीं, बल्कि मनुष्य के आंतरिक भावों और विचारों पर भी अच्छा प्रभाव डालती है।

तुलसी

कई बीमारियों पर भारी

- शरीर में किसी भी तरह के दूषित तत्व के एकत्र हो जाने पर तुलसी सबसे बेहतरीन दवा के रूप में काम करती है
- तुलसी के पत्तों को तांबे के बर्तन में एक घंटे तक भीगा रहने दें। यह पानी पीने से बहुत से बीमारियां पास नहीं आतीं

कौन-कौन से हो सकते हैं तुलसी से फायदे

जहर व पसली का दर्द दूर करती है : तुलसी हिचकी, खांसी, जहर का प्रभाव व पसली का दर्द दूर करती है। इससे पित्त की वृद्धि और दूषित वायु खत्म होती है। यह दुर्गंध भी दूर करती है।

दिल के लिए फायदेमंद : दिल की बीमारी से ग्रस्त लोगों के लिए यह अमृत समान है। इससे खून में कोलेस्ट्रॉल नियंत्रित रहता है। त्वचा रोगों में फायदेमंद, पाचन शक्ति बढ़ाने वाली और मूत्र से संबंधित बीमारियों को मिटाने वाली है। यह कफ और वात से संबंधित बीमारियों को भी ठीक करती है।

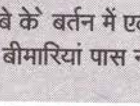

तांबे के बर्तन में तुलसी : तुलसी के पत्तों को तांबे के पानी से भरे बर्तन में एक घंटे तक भीगा रहने दें। यह पानी पीने से बहुत से बीमारियां पास नहीं आतीं।

तुलसी सबसे बेहतरीन दवा : तुलसी हिचकी, उल्टी, कृमि, हर तरह के दर्द, कोढ़ और आंखों की बीमारी में लाभ पहुंचाती है। शरीर में किसी भी तरह के दूषित तत्व के एकत्र हो जाने पर तुलसी सबसे बेहतरीन दवा के रूप में काम करती है।

बुखार में : बुखार में भी तुलसी के पत्तों के रस का सेवन करना चाहिए। मलेरिया में तुलसी एक कारगर औषधि है। तुलसी और काली मिर्च का काढ़ा बनाकर पीने से मलेरिया जल्दी ठीक हो जाता है।

किडनी की पथरी : किडनी की पथरी होने पर रोगी को तुलसी की पत्तियों को उबालकर बनाया गया काढ़ा शहद के साथ नियमित छह माह तक पिलाएं, पथरी मूत्र मार्ग से बाहर निकल जाएगी।

थकान दूर करने के लिए : ज्यादा थकान होने पर तुलसी की पत्तियों और मंजरी का सेवन करें, थकान दूर होगी। रोजाना चार-पांच बार तुलसी की पत्तियां चबाने से कुछ ही दिनों में माइग्रेन की समस्या में आराम मिलता है।

संकलन : आर्यसमाज, नोएडा

'मानव जीवन में तृष्णा और लालसा है, और ये दुःख के मूल कारण है'

स्वामी दयानन्द सरस्वती

हिन्दू मंच सोनीपत के कार्यक्रम में विशेष महानुभावों के साथ गुरुकुल के आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार जी।

गांधी स्मृति प्रतिष्ठान में अपने विचार व्यक्त करते संस्था के मंत्री कै. अशोक गुलाटी जी।

गांधी स्मृति प्रतिष्ठान द्वारा संस्था के मंत्री कै. अशोक गुलाटी जी को उनके द्वारा किए गए समाज सेवा के कार्यों के लिए सम्मानित करते गांधी स्मृति प्रतिष्ठान के पदाधिकारीगण।

विश्ववारा संस्कृति

आर्य समाज, बी-69, सैक्टर-33, नोएडा (उ.प्र.) दूरभाष : 0120-2505731, 9871798221